Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्यवर्ती

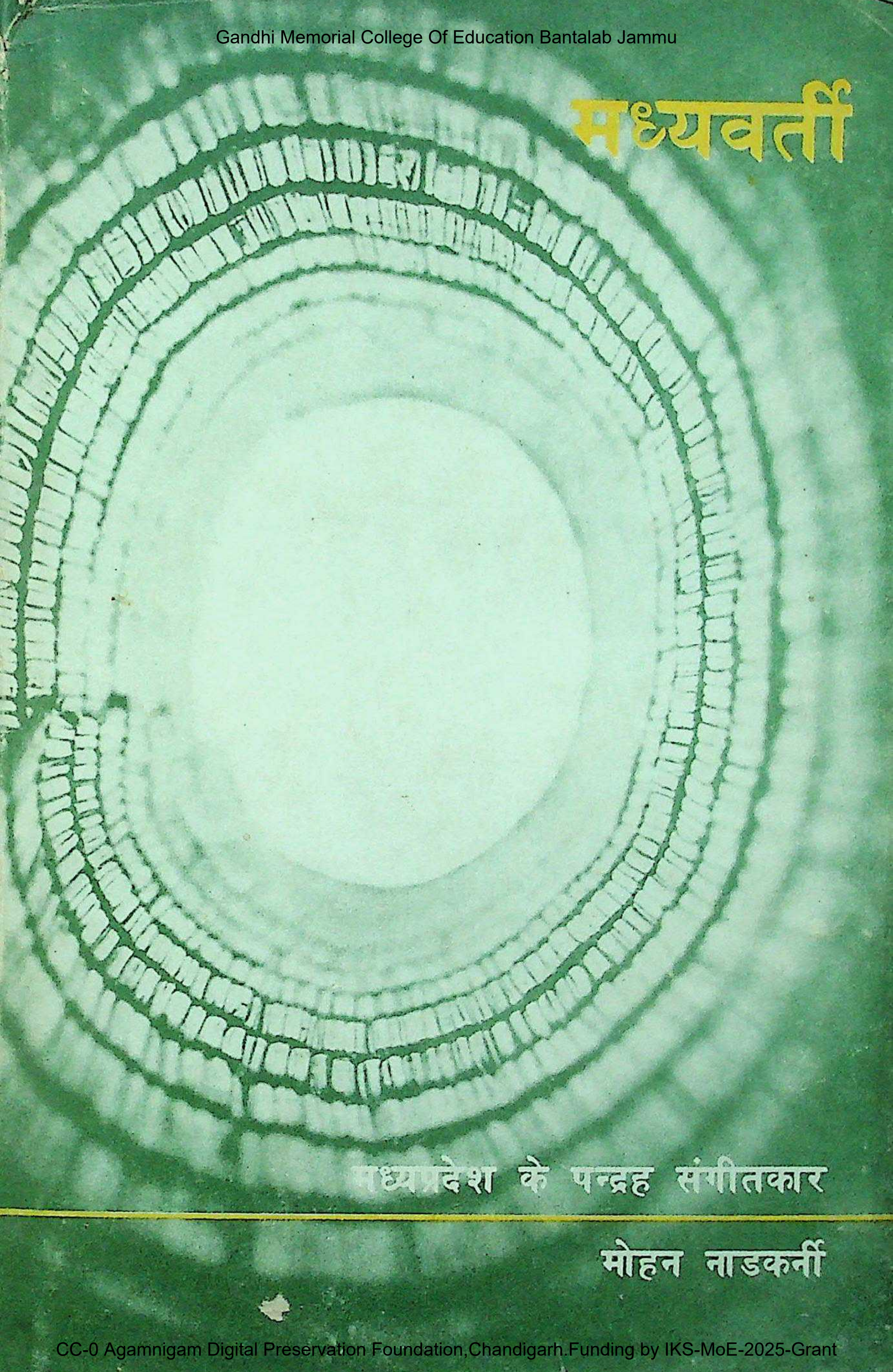

मध्यप्रदेश के पन्द्रह संगीतकार

मोहन नाडकर्णी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर्नाटक प्रदेश के उत्तर कनारा क्षेत्र में कारवार के **मोहन दत्तात्रेय नाडकर्णी** (59) पिछले तैंतीस वर्षों से स्वतंत्र लेखन और संगीत समीक्षा का कार्य कर रहे हैं। वे भारतीय संगीतशास्त्र, संस्कृत साहित्य और प्राचीन भारतीय संस्कृति के गहन अध्येता हैं। वे **गुरुदेव शरण** के उपनाम से भी लिखते हैं। उन्होंने हिन्दुस्तानी संगीत पर अनेक लेख लिखे हैं, 30 से अधिक बड़े संगीतकारों का साक्षात्कार लिया है और **द टाइम्स ऑव इंडिया, द इलस्ट्रेटेड वीकली ऑव इंडिया** और **द इकॉनॉमिक टाइम्स** के लिए पुस्तकों तथा रिकार्डों की समीक्षा भी की है। इसके अतिरिक्त, वे समय-समय पर होनेवाली संगीत सभाओं की समीक्षाएँ नियमित रूप से लिखते हैं और उन्होंने बम्बई तथा विशेष आग्रह पर भोपाल, औरंगाबाद, कलकत्ता, दिल्ली और सोमनाथ जैसे सुदूर स्थानों में आयोजित बड़े संगीत सम्मेलनों की समीक्षा की है।

उनकी रुचि मराठी रंगमंच और महाराष्ट्र के भक्ति तथा लोकप्रिय संगीत के संबंध में लिखने में भी है। कभी-कभी वे **द टाइम्स ऑव इंडिया** समूह के समाचार पत्रों के लिए संस्कृत नाटकों की समीक्षा भी लिखते हैं। प्रमुख संगीत संगठनों तथा विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें व्याख्यान देने के लिए भी आमंत्रित किया जाता है। वे आकाशवाणी से अंग्रेजी और मराठी में नियमित रूप से वार्ताएँ प्रसारित करते हैं। वे आकाशवाणी की क्षेत्रीय ध्वनि परीक्षा समितियों के सदस्य भी रहे हैं।

आवरण छायाकार : सुरेन्द्र राजन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्यवर्ती

Book Donated
By
Agnishekhar & Kshama Kaul

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजकमल प्रकाशन

नयी दिल्ली पटना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्यवर्ती

मध्यप्रदेश के पन्द्रह संगीतकार

मोहन नाडकर्णी

उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ संगीत अकादेमी
के लिए
राजकमल प्रकाशन

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc No.....5160....
Dated......28/1:....

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्यवर्ती

मध्यप्रदेश के पन्द्रह सगीतकार

प्रथम संस्करण
फरवरी, 1982

©

मूल
मोहन नाडकर्णी

अनुवाद
सुशील त्रिवेदी

प्रकाशक
उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ संगीत अकादेमी
ललित कला भवन, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, भोपाल-462003
के लिए
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
8 नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110002

मुद्रक : रुचिका प्रिण्टर्स द्वारा पूजा प्रेस
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

मूल्य
35 रुपये

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

□□

हमारे यहाँ संगीत के लिए सक्षम, संवेदनशील और सम्प्रेषणीय आलोचना भाषा अभी तक विकसित नहीं हो पायी है। संगीत और संगीतकारों पर गम्भीर विचारणीय सामग्री का बेहद अभाव है यद्यपि इधर बड़ी संख्या में संगीत के श्रोता बढ़े हैं जो समझ और जानकारी के साथ रसास्वादन करना चाहते हैं। इस सन्दर्भ में मध्यप्रदेश शासन द्वारा स्थापित और समर्थित तथा शास्त्रीय संगीत के विस्तार, प्रशिक्षण और अनुसन्धान के लिए सक्रिय **उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ संगीत अकादेमी** का यह प्रयत्न है कि शुरूआत के तौर पर मध्यप्रदेश के कुछ प्रमुख संगीतकारों और धाराओं पर विशिष्ट सामग्री तैयार और एकत्र की जाये और उसका सुरुचिपूर्ण प्रकाशन हो। **उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ** का आत्मवृत्त, **उस्ताद रजब अली ख़ाँ** पर लेखक और संगीतवेत्ता **श्री अमीक़ हनफ़ी** की पुस्तक, **पण्डित कुमार गन्धर्व** पर अनेक विशेषज्ञों के निबन्धों और उनसे लम्बी बातचीत आदि का संकलन, **मध्यप्रदेश के कुछ संगीतकारों** पर विशेषज्ञ **श्री मोहन नाडकर्णी** की पुस्तक और **रायगढ़ के कथक** पर **पण्डित कार्तिक राम** का लेखा-जोखा इस सीरीज़ के पहले-पहल प्रकाशन हैं।

अकादेमी के लिए ये पुस्तकें हिन्दी के सुप्रतिष्ठित **राजकमल प्रकाशन**, दिल्ली द्वारा प्रकाशित की जा रही हैं जिससे उन्हें व्यापक पुस्तक-संसार में अपना स्थान बनाने में मदद मिल सकेगी।

अशोक वाजपेयी
संचालक
उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ संगीत अकादेमी
ललित कला भवन, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग
भोपाल-462003

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मियाँ तानसेन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

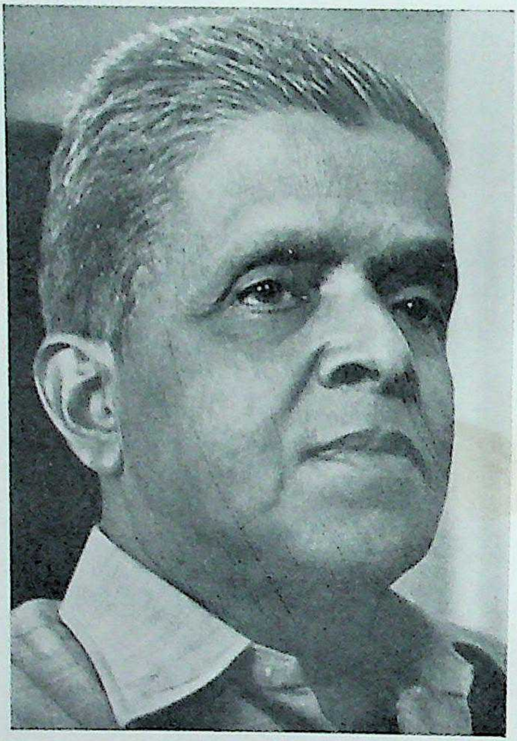

लेखक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

□□

मोहन नाडकर्णी की पुस्तक **मध्यवर्ती** की भूमिका लिखने में मुझे दो कारणों से बहुत प्रसन्नता है। पहला, वे भारत के उन इने-गिने संगीत-समीक्षकों में से एक हैं जो उत्तर भारत के संगीत और संगीतकारों के सम्बन्ध में लिखने के लिए सबसे योग्य हैं। दूसरा, मैं जितने भी अन्य समीक्षकों को जानता हूं या जिन्हें मैंने पढ़ा है उनमें मोहन सर्वाधिक विषयपरक हैं। संगीत जानना एक बात है और संगीत की बाबत सार्थक ढंग से लिखना एक दूसरी बात है। तटस्थ होकर और विषय-परकता की भावना के साथ लिखना सच्चे समीक्षक का वास्तविक प्रमाण-चिह्न ही नहीं है, बल्कि यही वह कारण है जिसकी वजह से मोहन अपने पाठकों के प्रिय बन सके हैं।

यह नहीं है कि मोहन सुनी हुई ध्वनि के प्रति अनुत्साही या टूटे हुए तार के प्रति अदोषदर्शी हैं, वे बहुत उत्साही समीक्षक हैं। वे जिन संगीतकारों से वास्तविक चाहत की अनूठी भावना के साथ मिल चुके हैं, उनकी बाबत वाग्विदग्धता के साथ बताते हुए उन्हें मैंने बहुत ध्यानपूर्वक सुना है। मुझे एक घटना की बाबत पता है। एक बड़े कलाकार अपने वादन के सम्बन्ध में मोहन द्वारा लिखी बिलकुल सही समीक्षा को पढ़कर क्रुद्ध हो गये थे। लेकिन यह लिखना उचित होगा कि बाद में उक्त

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महान् सितारवादक नरम पड़ गये और अपने समीक्षक के साथ उनने सुलह कर ली। मोहन इस घटना को लेकर न तो परेशान थे और न ही अनावश्यक रूप से चिंतित। वे जानते थे कि वे समीक्षा लिखने में पूरी तरह ईमानदार और सही थे और इससे भी बढ़कर बात यह थी कि मोहन जानते थे कि यह तथ्य स्वयं कलाकार भी जानता है। इसलिए उन्होंने अपनी तरफ से रुष्ट होने की बजाय समय व्यतीत होने दिया। उनका यही गुण है जो उन्हें समीक्षकों की पंक्ति में एक बिलकुल अलग स्थान दिलाता है।

मोहन को अपने इस चुने हुए क्षेत्र में जो उत्कृष्टता प्राप्त हुई है, उसका कारण यह है कि युवाकाल में उन्होंने संगीत का उसी कर्मठता से अध्ययन किया था, जिस कर्मठता से उन्होंने बाद के वर्षों में संगीत सुना है। उनमें वह अपार गुण है धैर्य, जो कि एक विशेषता है। मोहन ध्यान देकर सुनते हैं और यह जानते हैं कि लेखकों के भाँति संगीतकारों की प्रस्तुति में कुछ अंश खराब हो सकते हैं। और इस वजह से उनके पुरजे नहीं उड़ा दिये जाने चाहिए। वे कलाकार के किसी एक संगीत सभा में या कि फिर जीवन-पर्यन्त साधना में विकसित होने का इन्तजार करते हैं और उसके बाद ही अपना निर्णय देते हैं। वे न तो हड़बड़ी में रहते हैं, और न क्रूर हैं। उनके लेखन में समझदारी के गुण से अर्थ का अनर्थ नहीं होता है।

उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादेमी के लिए लिखे गये जीवन-वृत्तों के इस छोटे-से ग्रन्थ में यह बात देखी जायेगी। इसमें आलोचना का एक भी कड़ा शब्द नहीं है, वहाँ पर भी नहीं कि जहाँ वह जरूरी हो सकता था। संगीतकारों द्वारा की गयी गलतियाँ उनके जीवन के बाद भी बनी रह सकती हैं परन्तु मोहन की दृष्टि में जो अच्छी बातें हैं उनमें उससे कोई व्यवधान नहीं आता है। उदाहरणार्थ वह अपने पाठकों को याद दिलाते हैं कि पाठकों को यह नहीं भूलना चाहिए कि कुछ वर्षों पहले एच.एम.व्ही. ने **अलाउद्दीन खाँ** का जो लांग प्लेयिंग रिकार्ड तैयार किया था वह आकाशवाणी द्वारा उस्ताद के टेप किये संगीत की पुनर्प्रस्तुति है। उस समय उस्ताद नब्बे से अधिक वर्ष के थे। और इसलिए यह बात विशेष रूप से ध्यान में रखते हुए कि उस्ताद के संगीत के मूल टेप ही तकनीकी दृष्टि से ठीक न रहे होंगे और उनका संरक्षण भी ठीक से न किया गया होगा, उक्त रिकार्ड की समीक्षा कठोरता से नहीं की जानी चाहिए।

मोहन की सहृदयता हाफ़िज़ अली ख़ाँ के असमंजस के प्रति भी है। **उस्ताद हाफ़िज़ अली ख़ाँ** यह विश्वास करते थे कि "**प्राचीन ध्रुपद और होरी** का संगीत ही वास्तविक संगीत है," जबकि उस्ताद के पुत्र का रुझान नये रागों की निर्मिति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
में था। उस्ताद की दृष्टि में इन नये रागों का कोई उपयोग नहीं था।

मैंने मोहन को जुगलबन्दी के **दुरुपयोग** पर वास्तविक रूप में क्रुद्ध होते पाया है। मोहन इस आधार पर इसे सही रूप में ही **दुरुपयोग** कहते हैं कि 'अधिकांश मौकों पर कलाकारगण' एक दूसरे को पीछे छोड़ने की कोशिश में अक्सर ही अशोभन कलाबाजी में जुट जाते हैं और इस तरह सांगीतिक शिष्टाचार के अभाव को प्रकट करते हैं। मैं सोचता हूँ कि यह बात बहुत पहले ही कही जानी चाहिए थी। मोहन अभद्र सांगीतिक तौर-तरीक़ों की निन्दा करने में अविचलित रहे हैं। वह अपने साहित्यिक तौर-तरीक़ों में विनम्र हो सकते हैं किन्तु अभद्र सांगीतिक तौर-तरीक़ों की आलोचना करने में उन्होंने किसी को नहीं बख़्शा है। और यदि वे ऐसा न करते तो समीक्षा किसलिए की जाती?

वे कलाकार की कमियों को उभारने की तुलना में उसकी विशेषताओं को ज़्यादा महत्त्व देते हैं और इस तरह कलाकार की संवेदनशीलता को चोट पहुँचाये बिना, शिष्टता के साथ उस कलाकार की बाबत अपने तरीक़े से लिखते हैं। उदाहरणार्थ, **अमीर ख़ाँ** के सम्बन्ध में वे कहते हैं, "उनने (अमीर ख़ाँ ने) कला प्रवीणता का प्रदर्शन सिर्फ़ प्रदर्शन करने के लिए नहीं किया परन्तु अपने राग की मूल भावना पर ही अपने को केन्द्रित किया। यदि उनके गायन का भण्डार सीमित था, तो वह चुना हुआ भी था, जिसमें ऐसे राग सम्मिलित थे जो गहन और गम्भीर व्यंजना-वाले और उनकी आवाज़ के अनुरूप थे।"

बहरहाल, मैं निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि मोहन अपनी इस बुनियादी शिष्टता को किसी वांछित विषय के लिए अपने विचार पर हावी होने देते हैं। **डागर बन्धुओं** ने वेनिस, बर्लिन और पेरिस में अन्तर्राष्ट्रीय उत्सवों में प्रदर्शन देने-वाले सर्वप्रथम भारतीय संगीतकारों के रूप में इतिहास बनाया होगा परन्तु उन्होंने ध्रुपद और धमार के प्रसार के लिए जो किया उस पर शक किया जा सकता है। मैंने डागर बन्धुओं को पेरिस में सुना था, पर मैं इतना ही जानता हूँ कि उन्होंने भद्र श्रोतृवर्ग को व्यग्र कर दिया था।

भारतीय संगीत के सम्बन्ध में पश्चिम जगत की समझदारी एक उपार्जित अभिरुचि है, परन्तु उपार्जन करने में लम्बा समय लगता है। ऐसा नहीं है कि पश्चिम में भारतीय शास्त्रीय संगीत की प्रशंसा में जो कहा जाता है, उससे वे मुग्ध हों। इस विषय में वे **अमजदअली ख़ाँ** की बात से सहमत होते हुए उसे उद्धृत करते हैं। अमजदअली ने उनसे कहा है कि "अनुभव यह बताता है कि अपने कुछ प्रमुख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कलाकारों ने विदेशों में शास्त्रीय संगीत की जो संस्थाएँ स्थापित की हैं, उनसे एक भी क्षमतावान संगीतकार तैयार होकर नहीं निकला है। कम से कम भारत में तो अब तक किसी ने ऐसे किसी संगीतकार की बाबत नहीं सुना है।" मोहन ने इस विषय को और विस्तार से बताया होता। आखिरकार अमजद अली ने विदेशों में कार्यक्रम दिये हैं और उनका रंग-रूप जेट-युग के संगीतकार के अनुरूप है।

इस छोटी-सी किताब से खुश होनेवाली एक बात और यह है कि मोहन ने उन युवा कलाकारों का समुचित मूल्यांकन किया है, जो प्रोत्साहन पाने के पूरी तरह से हकदार हैं। उदाहरण के लिए, बुद्धादित्य मुखर्जी हैं, जो सिर्फ छब्बीस वर्ष के हैं और जो परिष्कृत रूप से समंजित प्रतिभा के लिए प्रसिद्धि पा चुके हैं। **मालिनी राजुरकर** हैं, जो बहुत ही सरल हैं किन्तु जिन्होंने अपने घराने की औपचारिक शुद्धता को मूल रूप से अर्जित कर लिया है। और फिर **अजय पोहनकर** हैं, जिनके सम्बन्ध में मोहन ने कहा कि उनका प्रदर्शन **निजता की प्रबल भावना** और **मौलिकता के लिए ओजस्वी व्यग्रता** से अनुप्राणित है, किन्तु उनमें परम्परा के प्रति अन्तर्निहित आदर की भावना भी है। हर स्थिति में यह ऐसा संतुलन है, जिसे प्राप्त करना कठिन है। अफ़सोस यह है कि ऐसे कलाकार, जो परम्परा के प्रति सम्मान भाव रखते हुए भी अपनी शैली बनाना चाहते हैं, अकसर ही दोनों से चूक जाते हैं।

यह भी उचित है कि मोहन ने दो अन्य युवा कलाकारों, **ओमप्रकाश चौरसिया** और **किरण देशपाण्डे** की ओर ध्यान दिया। इनमें से एक उद्यमी संतूर-वादक है और दूसरा, तबले का संगतकार। अन्य क्षेत्रों की भाँति संगीत के संसार में भी युवा और प्रतिभावान कलाकारों के लिए सही ढंग से अभिस्वीकृति पाना किसी तरह भी सरल काम नहीं है। प्रायः, और जैसा कि मोहन ने उपयुक्त ही संकेत किया है, नकली कलाकार को अक़सर थपथपाया जाता है। और वास्तविक रूप में स्वीकार किया जाता है। और अक़सर ही खोटा सिक्का असली सिक्के को बाज़ार से बाहर कर देता है और वास्तविक रूप से योग्य कलाकार आगे आने की आपाधापी से दूर रहना पसन्द करते हैं : संगीत जगत् का तीस से अधिक वर्षों तक करीब से अध्ययन करने वाले मोहन ने ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता महसूस की है जो उच्चतर मूल्यों की कामना करते हैं और उनका पालन करते हैं और अपने संगीत की बिना किसी समझौते के निष्ठापूर्वक साधना करते हैं। और मोहन से यह जानकर प्रसन्नता होती है कि ऐसे कलाकार आज भी हैं। हम उनकी सिर्फ़ अर्चना कर सकते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस पुस्तक को लिखने में मोहन को तीन बातों को ध्यान में रखना पड़ा था : कलाकारों की जड़ें मध्यप्रदेश में होनी चाहिए, उन्हें 1 नवम्बर 1956 (इस दिन पुनर्गठित मध्यप्रदेश का जन्म हुआ था।) को जीवित होना चाहिए और उनके साथ लेखक का व्यावसायिक सम्पर्क रहा हो। इन परिस्थितियों में मोहन को इन जीवनी और समीक्षात्मक टिप्पणियों को पन्द्रह कलाकारों तक सीमित रखना पड़ा। किसी-किसी मामले में जीवनी-सम्बन्धी विवरण का एक ख़ाक़ा पेश करते हैं, परन्तु यह अवश्य याद रखने की बात है कि कलाकार की जीवन शैली को रेखांकित करने की बजाय उसके कलात्मक मूल्यांकन पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया है।

मैंने अक्सर जानना चाहा है कि क्या उत्तर भारतीय संगीत के पक्षधरों ने कभी कर्नाटक संगीत की ओर कोई ध्यान दिया है। संगीतशास्त्री तत्काल ही उत्तर भारतीय और कर्नाटक रागों के बीच समानताओं की तुलना करने लगेंगे। उदाहरणार्थ, अहीर भैरव, भूपाली, रामेश्वरी या मालकौंस के कर्नाटकी समतुल्य क्या हैं?

निश्चय ही, हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत एक-दूसरे से एकदम अलग नहीं है, जैसा कि प्रथम दृष्टि या ध्यान में लगता है। मैं इस बात से कुछ हताश हुआ हूँ कि मोहन ने इस विषय पर विस्तार से चर्चा नहीं की है। हाँ, मैं यह भी जानता हूँ कि मोहन को किन बन्धनों के अधीन लिखना पड़ा है। कर्नाटकी संगीत की बाबत कलाकारों के क्या विचार हैं? और किसी एक विशिष्ट घराने में शिष्यों के प्रशिक्षण में अन्य सांगीतिक पद्धति को क्यों दूर रखना चाहिए? मेरा खुद का मत है कि हिन्दुस्तानी और कर्नाटकी पद्धति में संगीत को पृथक भागों में बाँटकर हम एक ऐसे विभेद को स्थायी बना रहे हैं, जो होना नहीं चाहिए। यदि मोहन ने इस सम्बन्ध में कुछ विस्तार से लिखा होता, तो मैं पसन्द करता। दो विभिन्न पद्धतियों के संगीतज्ञों को सुनने के लिए एकत्र होनेवाले रसिकों को देखकर कोई व्यक्ति यही अनुमान करेगा कि वे दो अलग-अलग क्षेत्र के हैं और अलग-अलग क्षेत्रों से आते हैं।

परन्तु चाहे जो हो, जब मद्धिम ध्वनियाँ समाप्त हो जाती हैं, तब संगीत, चाहे हिन्दुस्तानी हो या कर्नाटकी, स्मृति में गूँजता है। और यही तो संगीत है। जब मोहन ने **पण्डित शरदचन्द्र आत्माराम आरोलकर** से सभी प्रश्नों को बेकार करते हुए यह पूछा कि, फिर अच्छा संगीत क्या है? तब उत्तर स्पष्ट और विश्वसनीय था। "अच्छे संगीत का अनिवार्य गुण यह है, उसमें हृदय को छू सकने की क्षमता होनी चाहिए और हृदय को छूने की प्रक्रिया में उसे श्रोता की मानवीयता का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विस्तार करना चाहिए : संगीत को श्रोता को आनन्द देना चाहिए। उसका भावात्मक, आध्यात्मिक और प्रबुद्धात्मक संवर्द्धन करना चाहिए। और जीवन में उसके समग्र आनन्द में वृद्धि करनी चाहिए।" हमारे संगीतकारों की बाबत हमें बतलाते हुए मोहन ने हमें यह अवसर उपलब्ध कराया है कि हम यह जान सकें कि वे कौन हैं और उनका संगीत कैसे तैयार होता है। जहाँ समस्वरता है, वहाँ संगीत है। जैसा कि एक विद्वान व्यक्ति ने कहा है :

जहाँ कहीं भी समस्वरता, व्यवस्था और अनुपात है वहाँ संगीत है, और इसलिए नैसर्गिक परिवृत्तियों को हम चाहे दूर रखें, सुव्यवस्थित गतियों और नियमित गतिक्रमों के कारण यद्यपि उनकी ध्वनि कान में नहीं सुनाई देती है फिर भी वे हमारे अवबोधन में ऐसा स्वर उत्पन्न करते हैं जो सर्वाधिक रूप से समस्वरता से पूर्ण है।

यह बात सत्रहवीं सदी के अंग्रेजी भाषी **सर थामस ब्राउन** ने कही थी। हो सकता है कि वह 'ॐ' के सम्बन्ध में लिख रहे हों। 'ॐ' जो कि सारी ध्वनियों में सर्वाधिक सांगीतिक है, जिससे सारा संगीत अवतरित हुआ है, वह संगीत जो निश्चय ही नैसर्गिक परिवृत्तियों का है।

रजब अली ख़ाँ के सम्बन्ध में मोहन ने जो लिखा है, उससे मैंने यह जाना है कि रजबअली ख़ाँ संगीत-साधना के मूल आधार के रूप में ॐकार उच्चारण की साधना किया करते थे और दूसरों को यह करने का उपदेश देते थे। उनके मतानुसार ॐकार एक सम्पूर्ण स्वर है। जहाँ यह कहा गया, वहाँ पूरी बात कह ली गयी।

कुमार गन्धर्व की शैली के सम्बन्ध में मोहन ने जो अध्याय लिखा है, मैं उसकी ओर विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा। यह जानने की बात है कि प्रयोगों और नवाचारों के प्रति कुमार गन्धर्व के रुझान के सम्बन्ध में हाफ़िज़ अली ख़ाँ ने क्या कहा होता। क्या उन्होंने उसका अनुमोदन किया होता, अथवा, जैसा कि कम-से-कम कुछ लोगों को लगता है, स्थापित सिद्धान्तों में अनावश्यक दखलन्दाज़ी से हाफ़िज़ ख़ाँ अत्यन्त क्रुद्ध होते ? मोहन, शिष्टतौर से कुछ कम ही कहते हुए, लिखते हैं कि कुमार गन्धर्व का संगीत एक रूढ़िमुक्त दृष्टि इस अर्थ में प्रकट करता है कि उन्होंने किसी एक घराने के आधिपत्य को स्वीकार करने से पूरी तरह से इनकार कर दिया है। और उसकी विशेषता इस बात में है कि उसमें अनेक समकालीन गायन शैलियों—शास्त्रीय और लोक—दोनों ही में जो सर्वश्रेष्ठ है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसके समन्वय की साहसिक कोशिश है।" और चिन्तन करते हुए मोहन ने आगे लिखा है, "और शास्त्रीय धारा में जीवन्त लोक तत्त्वों के इसी सूक्ष्म युक्तिपूर्ण सम्मिश्रण की वजह से ही उनके गायन में विविधता और आकर्षण आता है। तत्काल ही इसका ताज़गी भरा प्रभाव पड़ता है। उनके गायन के अभिव्यंजनात्मक गुण की वजह से आज के श्रोताओं पर सम्मोहक प्रभाव पड़ता है।"

इस बात से धर्मद्रोह की ध्वनि आती है और संगीत का धर्माचार्य यदि कुमार गन्धर्व का हुक्का-पानी बन्द कर उनको धर्म बाहर कर दे तो वह शायद ठीक ही होगा। फिर भी एक रास्ता है—अपने सर्वश्रेष्ठ रूप में कुमार गन्धर्व आज के सर्वाधिक प्रशंसित संगीतकार हैं। यह तय है कि शुद्धतावादियों और प्रयोगधर्मियों के बीच द्वन्द्व चलता रहेगा, जैसा कि होना भी चाहिये। और आशा है कि सुदूर सहस्राब्दी में किसी समय हम संगीत के नये संश्लेषण और एक नयी पद्धति के जन्म की बाबत सुनेंगे, और तब निश्चय ही कुमार गन्धर्व का नये संगीत के अग्रदूत, सभी उद्देश्यों के लिए, एक नये घराने के संस्थापक, हालांकि उसमें कुमार गन्धर्व की जानकारी में स्वीकृति नहीं होगी, के रूप में उनका अभिवादन किया जायेगा। यह अनुमान है कि तब तक कुमार गन्धर्व को विद्रोही प्रतिभा के रूप में याद किया जाता रहेगा।

इसी दृष्टिकोण की वजह से मोहन की यह छोटी-सी पुस्तक हमारे समय के लिए प्रासंगिक और महत्त्वपूर्ण बन गयी है। वे जानबूझकर किसी विवाद को शुरू नहीं करते हैं। यदि उनकी टिप्पणी किसी विवाद को उभार दे, तो उतना ही पर्याप्त होता है। उन्हें स्वतः किसी विवाद को उभारने की ज़रूरत नहीं है। उनके विषय ही पर्याप्त विवादास्पद हैं और वे अपने समकालीन के सामने दर्पण लेकर खड़े हैं। और दर्पण कभी झूठ नहीं बोलता।

आज भारत में हमारे संगीतज्ञों की जीवनी की बेहद कमी है और मोहन ने इसी कमी को विचार तथा भावना की उल्लेखनीय स्पष्टता के साथ दूर करने की कोशिश की है। यह एक संक्षिप्त कृति है, और इसका लक्ष्य भी यही था। इसके अलावा, यह अपने ढंग की पहली कृति है जिसमें साक्षात्कार, विश्लेषण, विचार-विमर्श और कुछ जीवन सम्बन्धी जानकारी को समन्वित रूप में संग्रहीत किया गया है। यह अपने आप में एक ऐसा प्रयोग है, जो प्रशंसनीय है। शायद किसी समय मोहन संगीतकारों और उनके संगीत दोनों के विषय में और अपने मुद्दों को स्पष्ट करने के लिए वैज्ञानिक स्वरलिपि के साथ ज़्यादा विस्तार से लिखने का समय निकाल सकेंगे। अभी तो यह सुविधाजनक मार्ग-दर्शिका हमारे सांगीतिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्तराधिकार, कम-से-कम मध्यप्रदेश के सांगीतिक उत्तराधिकार, का उपयोगी परिचय दे सकेगी। अतः हमें **उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादेमी** को यह विचार सुझाने के लिए और इस विचार को कार्य रूप में परिणत करने के लिए मोहन को धन्यवाद देना होगा। यह पुस्तक उन संगीत प्रेमियों के लिए बहुत हर्ष की चीज़ है, जो संगीतकार को और संगीतकार के विचार को जानना चाहते हैं। अब उन्हें अवश्य ही संतुष्ट हो जाना चाहिए। क्योंकि वे अब इन दोनों के संबंध में कम-से-कम कुछ तो जानते हैं, भले ही यह अध्ययन इतना संक्षिप्त हो कि जो जानने की तृष्णा को और उद्दीप्त करे।

इस प्राक्कथन को लिखने में मैं खुद को सम्मानित मानता हूँ और मुझे खुशी भी है। इसका एक कारण और भी है। मोहन ने संगीत समीक्षा की पहली रचना **अब्दुल करीम खाँ** के संबंध में 3 अक्टूबर 1948 को **दि भारत ज्योति** के लिए लिखी थी, जबकि मैं उसका संपादन कर रहा था। जैसा कि जाहिर होगा, मोहन से मेरे संबंध तीन दशकों से भी अधिक के हैं। बीच के वर्षों में मैं सुदूर विदेश में रहा किंतु लौटकर आने पर अपने व्यावसायिक और निजी संपर्क फिर से जोड़ लिये। मोहन ने मेरे लिए **इलेस्ट्रेटेड वीकली ऑव इण्डिया** में लिखा। इन वर्षों में मोहन प्रौढ़ हुआ है, परंतु बदला नहीं। मोहन आज भी वही है, विनम्र, बहुज्ञ, आधिकारिक, दृढ़, किंतु कट्टरपंथी या स्वाग्रही नहीं। ये वे गुण हैं जो प्रशंसनीय हैं और जो इस पुस्तक में प्रतिबिंबित हुए हैं। मेरी कामना है कि यह पुस्तक अन्य कमोबेश महत्त्व के संगीत समीक्षकों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो।

एम. वी. कामथ
92, डायमंड कोर्ट-बी
नेपिययन सी-रोड़, बंबई 400 023

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भूमिका

□ □

पिछली कई शताब्दियों में हिन्दुस्तानी संगीत ने जो उपलब्धियाँ अर्जित की हैं, वे एक कीर्तिमान हैं। रागों की उत्तम विविधता, उनके तालों की अतिसूक्ष्मता और संकुलता, और कंठ और वाद्य-संगीत की शैलियों और पद्धतियों की विस्मयकारी भिन्नता सांगीतिक प्रयोगों की सिर्फ़ कौतुक नहीं हैं बल्कि उनके रचनाकारों की सांगीतिक अन्त:प्रज्ञा और रचनात्मक प्रतिभा के प्रति आदरांजलि भी हैं।

यह विडम्बना है कि भारत में अंग्रेज़ी राज के दौरान हिन्दुस्तानी संगीत को जिस सीमा तक उपेक्षा भोगनी पड़ी वह सच में भयावह थी। यदि उत्तर और मध्यभारत की तत्कालीन रियासतों के बहुत से शासकों ने और पश्चिमी क्षेत्र के कुछ राजाओं ने लगातार संरक्षण न दिया होता तो उदासीन विदेशी सत्ता और अज्ञानी तथा आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के कारण संगीत का भविष्य पूरी तरह से नष्ट हो गया होता।

वास्तव में इस पृष्ठभूमि में वे प्रदेश जो कि25 वर्ष पहले पुनर्गठित मध्यप्रदेश की रचना के लिए संविलयित हुए थे, सांगीतिक उत्तराधिकार के संरक्षण, संवर्द्धन और निरन्तर प्रगति में निर्णायक भूमिका निवाहने में सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने के अधिकारी हैं। उनके योगदान को वर्णित करने के लिए युगान्तरकारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शब्द उचित होगा । यथार्थ में मध्यप्रदेश में पहले की रियासतों के भूतपूर्व महाराजाओं और राजाओं द्वारा दिये गये लगातार संरक्षण को ध्यान में लिये बिना सांगीतिक परम्परा का कोई भी सर्वेक्षण पूरा नहीं हो सकता ।

राजनीतिक स्वतंत्रता और फलत: सामन्ती व्यवस्था के समाप्त होने से राज्य के सांगीतिक परिदृश्य में स्पष्ट परिवर्तन आया परन्तु यह हर्ष की बात है कि यह बदलाव ज्यादा समय के लिये नहीं आया । यह सही है कि अपने व्यवसाय का पालन करने के लिए कई प्रमुख संगीतकारों, विशेषकर तत्कालीन युवा पीढ़ी के कलाकारों ने मध्यप्रदेश में अपना घर छोड़कर बाहर जाना पसन्द किया । परन्तु इस परिवर्तित होनेवाली स्थिति के प्रति पूरी तरह से सचेत प्रदेश के नये शासन ने उन अनेक संगीत संस्थाओं में, जो कि विभिन्न राज्यों में भूतपूर्व राजाओं के संरक्षण में पहले से ही चल रही थीं, वरिष्ठ संगीतज्ञों को आर्थिक लाभ सहित सम्माननीय स्थान उपलब्ध कराने के लिए तुरन्त कदम उठाये । प्रदेश की राजधानी भोपाल में आकाशवाणी केन्द्र की स्थापना होने से, और फिर खैरागढ़ में शासन द्वारा पहला विश्वविद्यालय स्थापित किये जाने से, और शालाओं तथा महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में संगीत को सम्मिलित किये जाने से प्रदेश में रहनेवाले कलाकारों को लाभप्रद नियुक्ति के अवसर उपलब्ध हुए ।

इस लघु ग्रन्थ में उत्तर भारत की युग-युगीन सांगीतिक परम्परा में मध्यप्रदेश के 15 उल्लेखनीय संगीतकारों के योगदान का मूल्यांकन करने का विनम्र प्रयास किया गया है।

इन संगीतकारों के चयन में मुझे कई तथ्यों को ध्यान में रखकर काम करना पड़ा है । पहला तो यह कि इस ग्रन्थ में सम्मिलित करने के लिए चुने गये कलाकार वे हैं, जो पुनर्गठित मध्यप्रदेश के जन्म के दिन 1 नवम्बर 1956 को जीवित थे ।

दूसरा, यह चयन उन्हीं कलाकारों तक सीमित है जिन्हें कि मुझे **दि टाइम्स ऑव इण्डिया** और उनके सहयोगी प्रकाशनों में संगीत समीक्षक के रूप में अपने व्यावसायिक कैरियर के दौरान संगीत सभाओं के मंच पर सुनने का विशेष अवसर प्राप्त हुआ था ।

तीसरा, मैंने सांगीतिक पटल पर उन कुछ युवा कलाकारों को लाने की कोशिश की है जिन्हें मैंने हाल के वर्षों में प्रेरक गायन-वादन करते हुए सुना है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चौथा, सभी कलाकारों की, दो सम्भावित अपवादों, कुमार गन्धर्व और मालिनी राजुरकर को छोड़कर, सांगीतिक जड़ें मध्यप्रदेश में ही हैं। बहरहाल, मैं यह अनुभव करता हूँ कि इन दो गायकों ने मध्यप्रदेश में, उस क्षेत्र में जिसने वास्तव में उनकी रचनात्मक प्रतिभा के समग्र विकास को साकार किया है, अलग-अलग ढंग से अपनी जड़ खोज ली हैं।

और अन्त में पूरी विनम्रता के साथ मैं यह बतला सकता हूँ कि इस ग्रन्थ में इन कलाकारों का **प्रोफाईल** देने का उद्देश्य उस अर्थ में नहीं है, जो कि **प्रोफाईल** शब्द की रूढ़ भावना से व्यक्त होता है। इसमें संगीतकारों की जीवनी के सम्बन्ध में जानकारी दी गयी है परन्तु यहाँ यह सिर्फ उनके व्यक्तिगत योगदान का आकलन करने के लिए अपने लिए आधार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से है। इसके अतिरिक्त, चूँकि मुझे इन कलाकारों से मिलने और उनसे संगीत के विविध विषयों पर जी खोलकर चर्चा करने का अनेक बार मौका मिल चुका है, अतः ऐसी स्मरणीय मुलाकातों की स्मृतियाँ प्रत्येक विवरण का हिस्सा बन गयी हैं।

मैं इस ग्रन्थ के प्रकाशक **उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादेमी** के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिसने प्रदेश की रजत जयन्ती की स्मृति में इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने का उत्तरदायित्व स्वीकार किया।

विख्यात पत्रकार और **दि इलेस्ट्रेटेड वीकली आॅव् इण्डिया** के भूतपूर्व सम्पादक **श्री एम. वी. कामथ** ने मेरे निवेदन को स्वीकार कर इस ग्रन्थ के लिए प्रबोधक प्राक्कथन लिखकर मुझ पर विशेष कृपा की है। श्री कामथ के प्रति मैं अपना आभार सिर्फ़ शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकता हूँ।

अन्त में। इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि को टाइप करने में और वह भी घर के कभी खत्म न होनेवाले कामकाज के बीच, मेरी पत्नी **सुनीति** ने जो अपरिमित और स्नेहिल सहयोग दिया है वह किसी मायने में कम नहीं है। मेरे लेखन कार्य के प्रति यदि उनकी सम्पूर्ण अन्तर्भावितता न होती तो इतने कम समय में इस ग्रन्थ को पूरा करना मेरे लिए सम्भव नहीं हुआ होता।

मोहन नाडकर्णी
4/124 अम्बेडकर नगर
वरली, बंबई 400 018

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्रम

अलाउद्दीन खाँ : सच्चे आचार्य	21
हाफ़िज़ अली खाँ : अभिजात वर्ग के संगीतज्ञ	27
रजब अली खाँ : तुनुकमिजाज़ उस्ताद	31
अमीर खानी शैली	35
डागर बन्धु : ध्रुपद गायकी के ज्योति-वाहक	40
कृष्णराव शंकर पण्डित : ग्वालियर घराने में अग्रगण्य	45
आरोलकर : सबसे अलग संगीतज्ञ	49
कुमार गंधर्व : विद्रोही विभूति	55
अब्दुल हलीम जाफ़र.खाँ : परम्परा और नवाचार का संगम	61
अमजद अली खाँ : अग्रगामी सरोदिया	65
बुद्धादित्य मुखर्जी : सम्भावनाशील कला प्रवीण	70
मालिनी राजुरकर : सारग्राही गायिका	75
अजय पोहनकर : उपलब्धि की देहली पर	78
ओमप्रकाश चौरसिया : उद्यमी सन्तूरवादक	82
किरण देशपाण्डे : जिसके रक्त में ताल है	85

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अलाउद्दीन ख़ाँ : सच्चे आचार्य

□ □

यह बात आसानी से कही जा सकती है कि सन् 1962 में **उस्ताद अलाउद्दीन खां** के दिवंगत होने से भारतीय संगीत, या कहें विश्व संगीत, के इतिहास का एक निर्णायक अध्याय परिवर्तित हो गया। वे एक सांगीतिक विभूति से कहीं बहुत ऊँचे व्यक्तित्व के थे। वे एक ऐसे स्वप्नद्रष्टा थे कि जिनके समान कोई एक व्यक्ति कई सदियों के बाद जन्म लेता है। संगीत उनके लिए व्यवसाय से कहीं बहुत महत्त्वपूर्ण चीज़ थी। उनके लिए संगीत श्रद्धा का प्रतीक था, जिसमें भारतीय परम्परा में प्रतिष्ठित गुरु-शिष्य परम्परा का सार तत्त्व साकार था। वास्तव में इस गुरु-शिष्य परम्परा की भावना से उनकी अन्तरात्मा इतनी अभिभूत थी कि उससे उद्‌भूत होनेवाला संगीत ऐसा लगता था कि मानो वह धार्मिक उत्तेजना से अनुप्राणित हो और वह संगीत श्रोता को अंतर्मुखी बना देता था।

उस पुराने जमाने के जिन लोगों ने उनके महान् संगीत को सुना है वे हमेशा उनकी विशेषता को उनके सरोद के गहन और ओजपूर्ण स्वरों में अगाधरूप से प्रेरक तान और उनके संगीत की विनम्रता के गुण को भी व्याकुलता के साथ याद करते हैं। उनका संगीत आमतौर पर श्रोता के मन में उतर जाता था और उसे पता भी नहीं चलता था। विनम्रता के इस गुण और श्रोता को अन्तर्मुखी बना देने की क्षमता में ही कला के प्रति और स्वयं जीवन के प्रति उस संगीत के रचनाकार का गहन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धार्मिक दृष्टिकोण निहित है। इसी दृष्टिकोण ने उनके संगीत को विश्वजनीनता का प्रभामण्डल दिया।

अलाउद्दीन ख़ाँ को दिव्य की अभिव्यक्ति के रूप में वर्णित करना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। संगीत अपने आद्य शुद्ध रूप में आध्यात्मिक है और भारत में हमने ऐसी संगीत परम्परा का उत्तराधिकार अर्जित किया है जो स्वामी हरिदास, सूरदास, त्यागराज, श्याम शास्त्री, मुत्तू स्वामी दीक्षितार और विष्णु दिगम्बर जैसे संगीतकार संतों के प्रदेय से गरिमा मण्डित है। इन संगीतकारों की नामावली बृहत है और उपर्युक्त नाम तो उल्लेख के लिए बता दिये हैं।

अलाउद्दीन ख़ाँ, जो 'आचार्य' उपाधि के सच्चे हकदार हैं, इसी संगीतकार संत-परम्परा के थे और दुःख की बात है कि वे उन महान् लोगों में सम्भवतः अन्तिम थे।

संगीत के प्रति उनका धार्मिक दृष्टिकोण हर तरह के मत और चरित्र की धर्मान्धता की सीमाओं से परे था। सत्य के उत्कट साधक के रूप में उन्होंने संगीत के सौन्दर्यशास्त्र को समझ तथा आत्मसात् कर लिया था और वे अपने इस बहुमूल्य अर्जित भाव में प्रसन्नता के साथ उन लोगों को सहभागी बनाते थे जो उसे प्राप्त करने के लिए उनके पास आते थे।

हम जानते हैं कि अलाउद्दीन ख़ाँ का सांगीतिक संधान बहुत लम्बा और कठिन था। अनेक शिक्षकों, विशेषकर अपने अन्तिम **गुरु वजीर** ख़ाँ के साथ उनके शिष्यत्व की कथा आत्मविश्वास, साहस और अपने आदर्श के प्रति निरन्तर सर्मपण की गाथा थी। उन्हें अपनी साधना में कष्ट, दुःख, हताशा और अवमानना सहनी पड़ी थी। पर इन सब बातों से वे ज़रा भी विचलित नहीं हुए थे। किसी उत्साही और सर्मपित शिष्य पर वजीर ख़ाँ जैसी श्रेष्ठता के गुरु से प्राप्त गुरुकृपा का आशीर्वाद नानाविध और विपुल ही तो हो सकता था। शिष्य ने इस गुरु कृपा के साथ अपनी परिश्रमशीलता और कर्मनिष्ठा, अपनी प्रतिभा और कल्पनाशीलता, अपनी प्रज्ञा और भावना को जोड़ दिया।

वाद्य संगीत में उन्होंने परम्परा और प्रयोग का जो अनन्य संश्लेषण किया है उसका संगीत जगत में ऐतिहासिक महत्त्व है। महान संगीतज्ञ ने गायकी, लयकारी और तंत्रकारी का विलक्षण विलयन ही किया था और उसे सितार, सरोद और दूसरे अन्य वाद्यों के वादन में अंगीकृत किया था। और फिर स्वतः ही यह प्रदर्शित किया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था कि किस तरह उनकी नयी दृष्टि ने राग और रागनियों के लिए उनके वास्तविक रूप, गरिमा, भव्यता, रंग और दीप्ति में उभरना सम्भव बनाया है।

अलाउद्दीन ख़ाँ ने इस बात को दृढ़ता के साथ अस्वीकार किया था कि वाद्य-संगीत के प्रति उनका दृष्टिकोण परम्परा से प्रस्थान है, जैसा कि उनके आलोचक आरोपित करते थे। वे यह स्वीकार करते थे कि वाद्य-संगीत की परम्परा में विभिन्न घरानों द्वारा निरूपित वादन की अनेक शैलियों में से किसी एक में ही विशेषता अर्जन पर ज़ोर दिया गया है।

उनका दृढ़तापूर्वक कहना था कि अपने प्राचीन संगीतज्ञों ने सदैव ही संगीत पर ज़्यादा ज़ोर दिया है, बजाय अभिव्यक्ति के माध्यम पर। अपने मुद्दे को स्पष्ट करने के लिए अलाउद्दीन ख़ाँ अक्सर ही पुराने दिनों के वादकों के उदाहरण दिया करते थे। गत तोड़ा शैली में पारंगत सितारवादक से वादन के उस विशेष पक्ष में ही अपनी प्रवीणता दिखलाने की अपेक्षा की जाती थी। यह बात उन पर भी समान रूप से लागू होती थी जो कि आलाप और जोड़-शैलियों में पारंगत थे। अतः उनके मतानुसार विभिन्न वाद्य यंत्रों पर संगीत की विभिन्न शैलियों की व्याख्या को नियमित करनेवाले मानदण्डों का कोई सर्वनिष्ठ प्राधिकार पुराने समय में कभी नहीं रहा था।

संगीत की नयी दिशा निर्धारित करने में उस्ताद की संकल्पना की प्राण-शक्ति और उनकी रचनात्मक विभूति की बहुमुखता की बात इस तथ्य से यश विस्तारी रूप में सिद्ध होती है कि हमारे चार महानतम वाद्य-वादन कला-मर्मज्ञ उनके शिष्य हैं: उनके पुत्र **अली अकबर ख़ाँ** (सरोद), पुत्री **अन्नपूर्णा देवी रविशंकर** (सुरबहार), दामाद **रविशंकर** (सितार), और स्वर्गीय **पन्ना लाल घोष** (बाँसुरी)। उनकी विशाल शिष्य परम्परा में से ये चार नाम तो सिर्फ उल्लेख करने के लिए बताये हैं। उस्ताद एक श्रेष्ठ शिक्षक और प्रदर्शक थे। उन्होंने अपने शिष्यों को विभिन्न तकनीकों का सम्पूर्ण प्रशिक्षण दिया था। ये तकनीक बुनियादी तौर पर आलाप, जोड़, तार परन और ठोंक झाला जैसी ध्रुपद-धमार शैली से स्पष्टतः संबंधित थे। ख़याल और ठुमरी सरीखे गायन रूप गतकारी शैलियों के अनुरूप हैं, और आजकल सितार, सरोद, और अन्य वाद्यों पर बहुत लोकप्रिय हैं। उस्ताद इन शैलियों को भी अपने शिष्यों को सिखाते थे। वे उन्हें सेनिया बाज और पूरब बाज के बुनियादी अन्तरों को उनकी सभी बारीक़ियों और परिष्कृतियों के साथ बतलाते थे और उन्हें समकालीन शैली के कलाकारों की परिष्कृत चीज़ों को समझने और आत्मसात् करने के लिए भी प्रेरित करते थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सन् 1949 में एक रेडियो सम्मेलन में भाग लेने के लिए वे ठिगनी काठी के महान् पुरुष जब बम्बई आये थे तो मुझे उनसे बातचीत करने का सौभाग्य मिला था, और इन्हीं सब मुद्दों तथा कुछ और भी विषयों पर चर्चा हुई थी। वे डीलडौल में छोटे थे किन्तु सांगीतिक और आध्यात्मिक उपलब्धियों की दृष्टि से वे महान् थे। उन्होंने सफ़ेद पाजामे और कुरते के साथ सफ़ेद टोपी पहनी थी। उनकी पैनी और चमकदार आँखों में, ऐसा लगता था कि मानो एक विलक्षण दूसरी दुनिया की दृष्टि हो। उनकी अभिव्यक्ति सौम्य थी और मुझे लगा था कि मैं एक दिव्यात्मा की उपस्थिति में था। वे विनम्रता की साकार प्रतिमा थे, और उत्तर भारत के वाद्य-संगीत में अपने योगदान के विविध पक्षों के संबंध में उन्होंने हर्ष के साथ मेरा ज्ञानवर्द्धन किया।

अलाउद्दीन ख़ाँ न सिर्फ विद्वान शिक्षक और प्रदर्शनकारी महान् कलाकार थे बल्कि परमोत्कृष्ट संगीतकार और संगीत निर्देशक भी थे। उनका कहना था कि सरोद उनकी पहली और आख़िरी पसंद है। तत, अवनद्ध, धन और सुषिर समूहों के बहुत से वाद्यों पर उनका असाधारण अधिकार था। उन्होंने रागों के समृद्ध और वैविध्यपूर्ण भण्डार को नये ढंग से तैयार किया था और गीति-नाट्यों तथा नृत्य-नाट्यों के लिए संगीत दिया था। पश्चिमी संगीत की उन्हें सर्वग्राही समझ थी और भारतीय संगीत में वाद्यवृन्दकरण की सबसे पहले अगुवाई करने वालों में से वे एक थे।

तत्कालीन राजा **बृज नारायणसिंह** का संरक्षण स्वीकार कर अलाउद्दीन ख़ाँ वे तीसरे दशक की शुरूआत में मैहर को अपना घर बना लिया। मैहर में ही वे पहली बार गृहस्थ के रूप में जमे। मैहर में ही अली अकबर ख़ाँ और अन्नपूर्णा देवी का जन्म हुआ था। राजा ने अपने संरक्षणाधीनों के लिए एक भवन निर्मित कराया जो आनेवाले समय में देश के संगीतकारों और संगीत-प्रेमियों दोनों के लिए ही समान रूप से एक प्रमुख तीर्थ बननेवाला था। वह भवन उन शिष्यों की दो पीढ़ियों के लिए एक आदर्श गुरुकुल के रूप में भी विकसित हुआ, जिन्होंने अनुभवी गुरु के साथ रहकर प्रशिक्षण लिया।

प्रसिद्ध मैहर बैण्ड उस्ताद की ही कल्पना का साकार रूप था। अपने संरक्षक के आदेश पर उन्होंने इसका गठन किया था। इसके गठन की भी एक रुचिकर पृष्ठभूमि है।

महाराजा दो सक्षम संगीतकारों की तलाश में थे, पहला वह जो उन्हें संगीत सिखा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सके और दूसरा जो बैण्ड का संगठन कर सके। महाराजा को अलाउद्दीन ख़ाँ में ऐसा बहुमुखी प्रतिभावाला संगीतकार मिला जो दोनों ही दत्त कार्यों को पूरा करने में सक्षम था।

प्रथम विश्वयुद्ध के तुरंत बाद फ्लू की घातक महामारी पूरे भारत में फैल गयी थी, जिससे बड़ी संख्या में लोगों की मृत्यु हुई और अनेक अनाथ हो गये। मैहर में अलाउद्दीन ख़ाँ को ऐसे बहुत से अनाथ बालक मिले जिन्हें सहायता और आश्रय की आवश्यकता थी। ये सारे बच्चे स्थानीय मज़दूरों और किसानों के परिवार के थे जो न पढ़े-लिखे थे और न जिनके पास ठीकसे खाने या पहनने को कुछ था। अपने व्यक्तित्व के अनुरूप दूरदृष्टि से, उस्ताद ने उनमें से कुछ बालकों को अपने आश्रय में ले लिया और अपने बैण्ड के सदस्य के रूप में प्रतिभावान वाद्यवादक के रूप में उन्हें सँवार दिया। तीसरे दशक के अन्तिम चरण में लखनऊ के संगीत सम्मेलन में अपने प्रथम प्रदर्शन से, जिसका नेतृत्व स्वयं उस्ताद ने अपनी वायलिन के साथ किया था, यह बैण्ड प्रसिद्ध हो गया।

सुविकसित रूप से यह सत्य ही कहा जा सकता है कि वे अलाउद्दीन ख़ाँ थे जिन्होंने मैहर को भारत के सांगीतिक नक्शे में प्रतिष्ठत किया। वे बाद के वर्षों में **उदयशंकर** के साथ नृत्यकार के प्रसिद्ध वाद्यवृन्द निर्देशक के रूप में विदेशी दौरों पर गये थे और यदि हम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उस्ताद के उस अग्रगामी योगदान को याद करें तो कोई यह भी कह सकता है, उन्होंने मैहर को विश्व के सांगीतिक नक्शे में स्थान दिलाया था।

राज्य का विलय होने के बाद भी उस्ताद अपना विद्या-दान करते रहे। पुनर्गठित मध्यप्रदेश के शासन ने उन्हें स्थानीय संगीत महाविद्यालय का आजीवन प्राचार्य नियुक्त किया था। यह शोकजनक है कि अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में अनेक व्यक्तिगत दारुण विपत्तियों के कारण वे भावात्मक रूप से टूट गये थे और लम्बी बीमारी के बाद वे भग्न हृदय के रूप में दिवंगत हो गये।

जिन दिनों उस्ताद अपनी उपलब्धियों के शीर्ष पर थे, उन दिनों उन्होंने कुछ रिकार्ड तैयार करवाने की महज़ अनुकम्पा की थी। दुर्भाग्यवश, वे रिकार्ड आज उपलब्ध नहीं हैं, और न आज के हाई-फाई युग में वाणिज्यिक रिकार्डिंग कम्पनियाँ उस्ताद के संगीत को रिकार्ड करने की आवश्यकता महसूस करती हैं। और न संगीत जगत् को यह ज्ञात है कि उस्ताद का टेप किया हुआ संगीत, यदि है तो, आकाशवाणी और केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी के अभिलेखागारों में कितना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है। कुछ वर्षों पहले, एच. एम. वी. द्वारा जारी किया गया लांग प्लेइंग रिकार्ड सुनकर श्रोता सिर्फ़ दुखी होगा। इस रिकार्ड में प्रस्तुत कौशी भैरव और हेमराग आकाशवाणी द्वारा तब टेप किये गये, जब वे नब्बे से अधिक वर्ष के थे। इसके अतिरिक्त, इसमें शक नहीं कि मूल टेप ही तकनीकी दृष्टि से त्रुटिपूर्ण होंगे और उनका संरक्षण ठीक से नहीं किया गया होगा। यह कहना व्यर्थ है कि एच.एम. वी. रिकार्ड उनके संगीत के प्रति न्याय नहीं करता है। जैसाकि स्वयं अली अकबर ख़ाँ ने उस रिकार्ड की भूमिका में अपनी टिप्पणी में लिखा है कि यह रिकार्ड उनके पिता के संगीत की बानगी के रूप में उतना नहीं बल्कि उत्तर-भारत के सांगीतिक इतिहास के बहुमूल्य स्मृति-चिह्न के रूप चाहने और सुरक्षित करने के लिए है।

यह प्रसन्नता की बात है कि उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ के जीवन और कृतित्व के विषय में अंग्रेजी तथा कई भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं में लिखा जाता रहा है। **राजेन्द्र शंकर** ने अंग्रेज़ी में और **लक्ष्मीनारारण गर्ग** ने हिन्दी में उनकी जीवनी प्रकाशित की है। परन्तु वे संक्षिप्त हैं। उस्ताद की पहली बृहत जीवनी शायद **मदनलाल व्यास** द्वारा लिखी गई है। यह जीवनी उत्तर प्रदेश में हाथरस से निकलनेवाली हिन्दी की प्रमुख संगीत पत्रिका **संगीत** में क्रमश: प्रकाशित हुई थी। इस जीवनी के लिए लेखक ने मैहर में लम्बे समय तक रहकर सामग्री एकत्र की थी। उन्होंने व्यक्तिगत साक्षात्कारों, संदर्भ ग्रंथों तथा अन्य स्रोतों का भी उपयोग किया है। उस्ताद की जन्म शताब्दी की स्मृति में **जतिन भट्टाचार्य** द्वारा अंग्रेज़ी में प्रकाशित उनकी बृहत जीवनी लेखक की मौलिक कृति नहीं है, जैसा कि लेखक ने दावा किया है बल्कि वह मदनलाल व्यास की रचना का लगभग शब्दश: भाषान्तर है।

जैसा कि अधिकांश अन्य पुराने उस्तादों के संबंध में है उसी तरह अलाउद्दीन ख़ाँ की जन्मतिथि के संबंध में विवाद है। आमतौर पर यह माना जाता है कि उनका जन्म 1862 में हुआ था और वे 110 वर्ष तक जीवित रहे। कुछ अध्येताओं का मत है कि उनका जन्म 1881 में हुआ था। संयोगवश, उस्ताद ने स्वयं मुझसे अपना जन्म वर्ष 1870 बताया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हाफ़िज़ अली ख़ाँ : अभिजात वर्ग के संगीतज्ञ

□ □

मैं पिछले चालीस वर्षों से संगीत सुनता आ रहा हूँ। इस अवधि में मुझे पुरानी पीढ़ी के अनेक यशस्वी संगीतकारों को देखने, सुनने और जानने का सौभाग्य मिला है और मैं आज भी उनके महान् संगीत की बारम्बार उभरनेवाली स्मृतियों को अपने मन में सँजोये हुए हूँ। परन्तु मैं यह महसूस करता हूं कि **फैयाज़ खाँ, ओंकारनाथ ठाकुर** और **केसरबाई केरकर** के सम्भावित अपवादों को छोड़कर **उस्ताद हाफ़िज़ अली खाँ** जैसे बिरले ही संगीतकार होंगे जो सिर्फ़ अपनी उपस्थिति से श्रोताओं को मंत्र-मुग्ध कर सकते थे। हाफ़िज़ अली ख़ाँ का व्यक्तित्व चित्ताकर्षक और गौर वर्ण का था। अपनी बनी-ठनी दाढ़ी, अपनी तेज़ चमकती आँखों, अपनी कशीदा कढ़ी टोपी या सुदर्शन पगड़ी की वजह से वे पूरी तरह से अभिजात वर्ग के दिखाई देते थे, जिनकी संगीत सम्मेलन के मंच पर मात्र उपस्थिति ही, इसके पहले कि वे अपने सरोद पर अपने चुने हुए राग के आरम्भिक सुरों को यों ही छेड़ें, श्रोताओं के स्वैच्छिक समर्पण की मानो माँग करती और समर्पण प्राप्त कर लेती थी।

बंबई के संगीत सम्मेलनों में उस्ताद यदाकदा ही और काफी लम्बे अन्तरालों में आये थे। मुझे उन्हें तीन बार सुनने का मौका मिला था परन्तु ये उनके अकेले के कार्यक्रम नहीं थे, वरन रात्रिकालीन होनेवाली सुदीर्घ सभाएँ थीं, जिनमें भाग लेने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वाले कई कलाकारों में से वे एक थे। आजकल जितनी जल्दी-जल्दी ऐसी सभाएं आयोजित होती हैं, उन दिनों नहीं हुआ करती थीं। बहरहाल, रेडियो पर उनके द्वारा किये गये वादनों को मैंने भरपूर सुना है।

कोई मुझसे सहमत हो या न हो, लेकिन मैंने जितनी भी बार हाफ़िज़ अली ख़ाँ को सुना उतनी ही बार मैं सरोद संगीत के अन्य प्रमुख कलाकार मैहर के उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ को स्मरण करने के लिए किसी-न-किसी रूप में प्रेरित हुआ। उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ, हाफ़िज़ अली ख़ाँ के वरिष्ठ गुरु-भाई थे। वास्तव में उस्ताद वजीर ख़ाँ के इन दो प्रमुख शागिर्दों ने इतने स्पष्ट रूप से स्वतः की शैली विकसित कर ली थी कि वह उनके मिजाज़ और व्यक्तित्व को, उनकी असंदिग्ध व्यक्तिगत विशेषता को प्रतिबिम्बित करती थी।

पारम्परिक तौर-तरीक़ों में लम्बे समय तक प्रशिक्षण पाने के कारण ये दोनों ही गुरु-भाई अटल शुद्धतावादी थे। परन्तु जहाँ संकोची और विनीत अलाउद्दीन ख़ाँ ने अपने संगीत को विलक्षण अन्तर्मुखी रूप दिया, वहीं हाफ़िज़ अली ख़ाँ के संगीत में स्वत्व सूचक आभिजात्य का गुण था, जिससे उसकी ध्वनि बहिर्मुखी और इसलिए, प्रभावकारी थी।

इन दो महान संगीतज्ञों में एक और मुद्दे में अन्तर था। जैसाकि हम जानते हैं, अलाउद्दीन ख़ाँ ने, उदयशंकर के नृत्यदल से सम्पर्क के दौरान, विदेश-प्रवासों के फलस्वरूप, पश्चिम संगीत के प्रति सर्वग्राही समझ विकसित कर ली थी और वाद्यवृन्द संगीत में प्रयोगों की अगुवाई की थी। इस वाद्यवृन्द संगीत की जड़ें भारतीय परम्परा में ही थीं। इस दृष्टि से हाफ़िज़ अली ख़ाँ ने परम्परानिष्ठ रहना पसंद किया।

हाफ़िज़ अली ख़ाँ, गुलाम बंदगी ख़ाँ के परिवार के वंशज थे। गुलाम बंदगी ख़ाँ अपनी जन्मभूमि अफ़गानिस्तान स रीवाँ महाराजा के दरबार में आये थे। वहाँ उन्होंने प्यार ख़ाँ के, जो कि मियाँ तानसेन की सांगीतिक वंश-परम्परा के थे, शिष्य बिश्वनाथसिंह का शिष्यत्व ग्रहण किया था। गुलाम बंदगी ख़ाँ के पुत्र गुलाम अली ख़ाँ को अफ़गानी रबाब को धातु के तारवाले सरोद में बदलने का श्रेय जाता था।

हाफ़िज़अली ख़ाँ ने अपने पिता नन्हें ख़ाँ से जो गुलामअली के पुत्र थे, सेनिया घराने की परम्परा और सरोद-वादन तकनीक का उत्तराधिकार अर्जित किया था। हाफ़िज़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अली के पिता की मृत्यु उस समय हो गयी जब वे सिर्फ़ 19 वर्ष के थे। पर इस त्रासदी से युवा हाफ़िज़ अली विचलित नहीं हुए। उन्होंने सम्पूर्ण समर्पण के साथ अपना रियाज़ उस समय तक जारी रखा, जब तक कि रामपुर के **उस्ताद वजीर ख़ाँ** ने उन्हें अपने अधीन नहीं ले लिया। इससे उन्हें सेनिया घराने की बीनकार परम्परा पर सम्पूर्ण अधिकार अर्जित करने में सहायता मिली।

परन्तु संगीत विद्या के प्रति हाफ़िज़ अली ख़ाँ की साधना अभी पूरी नहीं हुई थी। वे **स्वामी हरिदास** के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी और वरिष्ठ विद्वान **चुक्का लाल** और **गनेशी लाला** से प्राचीन ध्रुपद शैली सीखने के लिए वृन्दावन गये। उन्होंने ग्वालियर में महान् गायक **भैया गनपत राव** से ठुमरी शैली भी सीखी। ग्वालियर के तत्कालीन **महाराजा माधव राव सिंधिया** ने उनकी सांगीतिक उपलब्धियों से प्रभावित होकर उन्हें अपने दरबार में संगीतकार नियुक्त कर दिया। हाफ़िज़ अली ख़ाँ इस पद पर तब तक बने रहे, जब तक कि यह रियासत भारत संघ में विलीन न हो गयी।

यह कहा जाता है कि उस्ताद का संगीत ध्रुपद के भव्य अभिजात, ख़याल की वाग्मिता, अलंकार से विभूषित रुचिरता, और ठुमरी की सूक्ष्म संवेदनशीलता के अनन्य सुमिश्रण को मूर्तरूप से व्यक्त करता था। इसके बावजूद, उनका वादन प्रमुख रूप से ध्रुपद शैली में उन्मुख रहता था और वे तबले की बजाय पखावज से अपने संगीत का सुर मिलाते थे। उनके मतानुसार पखावज के घोषपूर्ण ध्वनिस्वरूप का उनके वादन से अच्छा तालमेल बैठता था।

पखावज के प्रति उस्ताद के अनुराग का एक और कारण यह था कि महान् पखावज-वादक **कुदऊ सिंह** के परिवार से उनके अंतरंग संबंध थे। दोनों परिवारों के वंशजों ने तीन पीढ़ियों तक साथ-साथ बजाया था और वे सौजन्यता, आदर तथा सदाशयता के युगों पुराने संबंधों को तोड़ना भी नहीं चाहते थे।

इसलिए इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि उनकी दृष्टि में प्राचीन ध्रुपद और होरी रूप का संगीत ही सच्चा संगीत था। इस बात से यह व्यंजना होती है कि आज ख़याल और ठुमरी को जितनी लोकप्रियता मिली हुई है वह उनके योग्य नहीं है। और तथाकथित स्वनिर्मित राग के नये बनते चलन के प्रति भी वे सदय नहीं प्रतीत होते थे। उस्ताद की दृष्टि में नये रागों का कोई उपयोग नहीं था क्योंकि उनकी राय में हमारे संगीतशास्त्र द्वारा मान्य किये गये अनगिनत राग पहले से ही मौजूद हैं, जिनकी बाबत हमारे संगीतकार जानने की कोशिश भी नहीं करते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर ऐसा लगता है कि हाफ़िज़ अली ख़ाँ ने अपने शागिदों को विस्तृत शास्त्रीय परिधि के भीतर नये आयामों और क्षेत्रों का संधान करने से हतोत्साहित नहीं किया। उनके तीसरे और कनिष्ठ पुत्र **अमजद अली** का उदाहरण लें। यह कह कर कि अमजदअली में सरोद संगीत में ख़याल गायकी अन्तर्ग्रहित करने और प्रयोग में लाने की सहज प्रवृत्ति है, वे अपने प्यारे पुत्र की प्रतिभा और कल्पनाशीलता का सगर्व उल्लेख किया करते थे। उनके विचार से सरोद-वादन के तकनीक का ख़याल गायकी से सुमिश्रण करने का काम चुनौती भरा है और जब अमजद अली ने इस चुनौती को उठाया तो पिता ने उसे आशीर्वाद दिया। बहरहाल, यह पता नहीं है कि अमजद अली के दूसरे उद्यम नये रागों की रचना को भी उनके पिता से आशीर्वाद मिला था या नहीं।

भव्यता सदैव ही हाफ़िज़ अली के सितार-वादन की विशेषता थी, भव्यता चाहे जिस रूप में हो लेकिन होती अवश्य थी। उनकी प्रस्तुतियों में शास्त्रीय संयम का अन्तर्प्रेरणात्मक स्वतंत्रता से सुमिश्रण रहता था। शब्दों के श्रेष्ठ अर्थ में उनका मानस दर्शन उतना ही निर्मल था, जितना कि उनका स्वर-विन्यास अधिकृत रहता था। उनके संचारी आलापों में गहन स्पष्ट स्वर उसी तरह विलीन होते थे जिस तरह कि विशाल अंतरिक्ष में चमकते हुए क्षणभंगुर उल्का-पिण्ड विलीन हो जाते हैं, जबकि परवर्ती जोड़ और झाला उनकी कल्पनाशीलता के विस्तार को प्रदर्शित करते। द्रुत में संगत के अवनद्ध वाद्य की सान्द्र गूँज और तीव्रगति से वादन के लयात्मक स्वराघातों के साथ वे हमें आह्वान की व्याकुल कर देने वाली ऊँचाइयों पर ले जाते थे।

अन्य अनेक विभूतियों की भाँति हाफ़िज़ अली ख़ाँ को उत्तरभारत के पारम्परिक संगीत में उनके योगदान की मान्यता में विपुल सम्मान प्राप्त हुआ था। अपने गुरु-भाई की भाँति वे भी लम्बी अवधि तक बीमार रहे और अस्सी वर्ष से बहुत अधिक अवस्था में 1972 में दिवंगत हुए थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

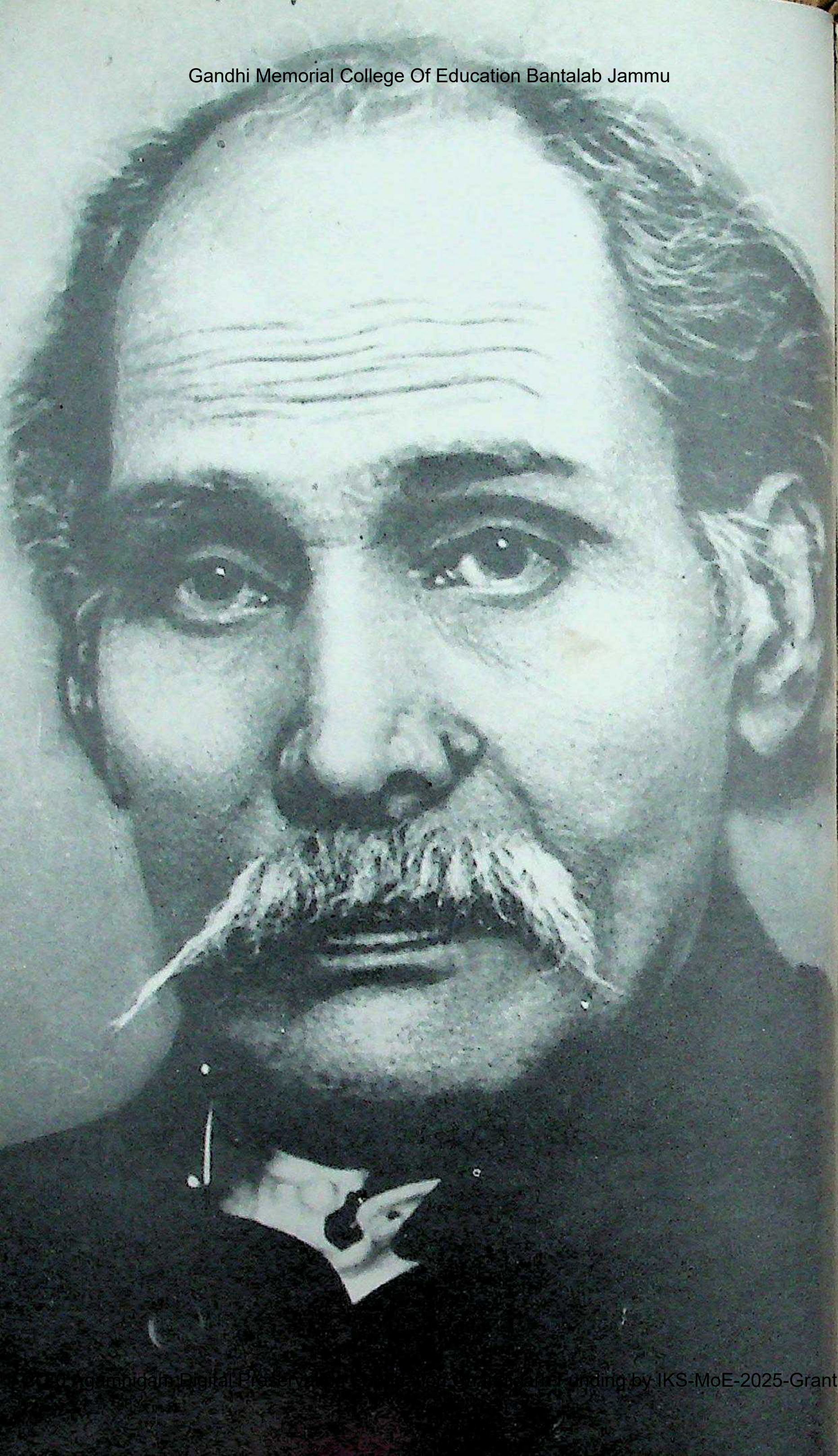

Agamnigam Digital Preserv... Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रजब अली ख़ाँ : तुनुकमिजाज़ उस्ताद

□ □

देवास के संगीतज्ञ **उस्ताद रजब अली ख़ाँ** के जीवन्त प्रदर्शन को सुनने का मुझे सिर्फ एक बार अवसर मिला था। यह बात 1957 की थी, जब वे बंबई में **स्वामी हरिदास संगीत सम्मेलन** में आमंत्रित किये गये थे। उनके उस गायन और उसके बाद उनसे हुई मुलाकात की यादें आज भी आकुल विशदता के साथ मेरे मन में समायी हुई हैं।

उन दिनों उस्ताद की आयु 80 वर्ष से अधिक की बतायी जाती थी। निश्चय ही वे काफी वृद्ध दिखाई देते थे। जब उनके प्रदर्शन का मौका आया तो माइक्रोफोन के सामने उनके आसन तक उन्हें सहायता देकर पहुँचाया गया। परन्तु मंच पर सिर्फ़ अपनी उपस्थिति से उन्होंने श्रोताओं को प्रभावित कर दिया। उनका व्यवहार शालीन था और उन्होंने जो पोशाक पहनी थी, ख़ासकर के मराठा पगड़ी (जिसकी बाबत मुझे बाद में पता चला कि वह उन्हें उनके संरक्षक महाराजा ने उपहार में दी थी) बीते हुए किन्तु गौरवशाली युग की याद दिलानेवाली थी।

यह स्वाभाविक ही था कि उस्ताद को सुनने के लिए प्रतीक्षारत विशाल श्रोता-समूह में प्रत्याशा की गहन भावना स्पष्ट तौर पर व्याप्त थी। शुरू में, कुछ ऐसे क्षण थे जब हमने उन्हें मुश्किल में फँसा हुआ पाया। वे अपने सांगीतिक अस्तित्व

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की अन्तरतम प्रेरणाओं को अभिव्यक्त करने की अनिवार्य इच्छा और वृद्धावस्था के कारण उतनी ही कठिन बाध्य करनेवाली सीमाओं के बीच यथाशब्द विभाजित हो गये थे। अपनी इस विषम स्थिति पर उन्होंने तत्काल ही विजय प्राप्त कर ली और चील-झपट्टे से बिहागड़ा पर टूट पड़े। इसके बाद उन्होंने नायकी कानड़ा, बसन्त और मालकौंस प्रस्तुत किया। ये सब उन्होंने एक के बाद एक तुरंत गाये किन्तु पर्याप्त ओज के साथ जो उनकी उम्र के लिहाज़ से विस्मयकारी था।

यह बात समझी जा सकती है कि ये प्रस्तुतियाँ संक्षिप्त थीं, किन्तु वे पूरी तरह से परिष्कृत और सुशृंखलित थीं। परन्तु जिस बात के संबंध में हममें से अधिकांश लोग संदेहशील बने रहे, वह थी उनकी गायन शैली, बावजूद इसके कि हम उनके ओजस्वी और अक्सर जटिल तान रूपों की प्रचुरता से आश्चर्यचकित थे। न केवल रागों और उनकी चीज़ बन्दिशों, वरन् उनके विस्तार की पद्धति जो कि अच्छी तरह से चुनी गयी लयकारी से अलंकृत थी, पर भी अतरौली-जयपुर घराने का स्पष्ट प्रभाव था।

अल्लादिया खाँ इस घराने के शीर्ष गुरु के रूप में सम्मानित हैं।

रजब अली ख़ाँ के जीवन और कैरियर से जुड़ी हुई कथाओं का भण्डार विशाल है। मैंने स्वत: ऐसी अनेक कथाओं को उन पुराने लोगों से सुना है जिन्होंने उस्ताद को उनके सर्वश्रेष्ठ समय में सुना था और उन्हें क़रीब से जानते भी थे। उनसे जुड़ी कुछ घटनाएँ उनकी सहज उदारता और हार्दिक आवभगत को प्रदर्शित करती थीं, जबकि कुछ अन्य घटनाएँ उन्हें तुनुकमिजाज़ी और मनमौजी बतलाती थीं। इन घटनाओं में उन्हें ऐसा सनकी उस्ताद निरूपित किया गया है जो अपने साथी के साथ मामूली से और नाजुक दोनों ही किस्म के मामलों को लेकर मार-पीट करने पर उतारू होने में नहीं चूकते। ऐसी भी और दूसरी घटनाएँ हैं जो हमें बताती हैं कि इत्र के प्रति उनका कितना भव्य मोह था और इत्र ख़रीदने में वे कैसे हज़ारों रुपये खर्च कर देते थे। इससे भी ज़्यादा हिन्दू धर्म और संस्कृति के प्रति उस्ताद का प्रेम, भगवत गीता के प्रति उनका समर्पण और हिन्दू मन्दिरों में आराधना के लिए जाने की बातें ऐसी थीं कि उस्ताद के प्रशंसकों के मन में उनके प्रति गहन प्रशंसा जाग्रत करती थीं।

इन सबसे ऊपर, उनके घराने के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी और अक्सर भ्रम-कारी कथाएँ संगीत जगत् में प्रचलित थीं। इस संबंध में उस्ताद से सीधे ही जान-कारी प्राप्त करने के उद्देश्य से मैंने उनके प्रदर्शन के तत्काल बाद दिल मजबूत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करके उनसे मुलाक़ात कर ली। मुझे बताया गया था कि नगर में वे थोड़े समय ही रुकनेवाले हैं। इसलिए मेरी उनसे मुलाक़ात और भी थोड़े समय की रही।

रजब अली ख़ाँ ने बिना कोमल शब्दों के स्पष्ट ही मुझसे बताया कि उन्होंने हिन्दुस्तानी संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता **मुग़ल ख़ाँ** से प्राप्त की थी, जो कि अपने समय के एक प्रमुख संगीतकार थे और बड़े **मोहम्मद ख़ाँ** के शिष्य थे। मुग़ल ख़ाँ देवास के महाराजा (बड़ी पाँती) के सरंक्षणाधीन थे। अपने पिता से गायन में पक्की शिक्षा पा लेने के बाद रजब अली को प्रख्यात **बंदे अली ख़ाँ** के पास वीणा सीखने भेजा गया। जब रजब अली ख़ाँ किशोर वय के थे तब ही उन्होंने इस कठिन वाद्य पर विस्मयकारी अधिकार अर्जित कर लिया था।

बाद में, बन्दे अली ख़ाँ की मृत्यु के उपरांत **मुग़ल ख़ाँ** और रजबअली दक्षिण महाराष्ट्र में तत्कालीन रियासत कोल्हापुर चले गये। कोल्हापुर रियासत संगीत और अन्य प्रदर्शनकारी कलाओं को संरक्षण उपलब्ध कराने के लिए ख्यात थी। रजब अली कोल्हापुर में करीब 20 वर्ष रहे। उनके व्यावसायिक जीवन में यह प्रवास एक स्मरणीय अवस्था का प्रतीक भी था। क्योंकि उस अवधि में कोल्हापुर दरबार में **अल्लादिया ख़ाँ** भी राज-संगीतकार थे। जैसा कि होना था, ये दो सामान्य उस्ताद और युवा रजब अली परस्पर घृणा करते थे। ये विरोधाभासी लग सकता है, इसके बावजूद, दो उस्तादों के बीच तनाव के सम्बन्ध युवा दक्ष संगीतकार के लिए किसी प्रकार से लाभप्रद सिद्ध हुए। रजब अली अल्लादिया ख़ाँ से सिर्फ उनकी प्रदर्शन-क्षमता से ही स्पर्धा नहीं करते, परन्तु उन्होंने महाराष्ट्र के लोगों से **दक्षिण का शेर** की उपाधि प्राप्त कर ली थी।

रजब अली ख़ाँ ने अल्लादिया ख़ाँ के प्रति अपने ऋणको स्पष्ट शब्दों में मना किया। उन्होंने अपने को गर्व के साथ इन्दौर घराने का सच्चा प्रतिनिधि कहा। परन्तु उन्होंने स्वीकार किया कि अनेक वर्ष तक अल्लादिया ख़ाँ के नित्य सहवर्ती संगतकार प्रख्यात सारंगी वादक हैदर बख़्श से प्राप्त मार्गदर्शन से वे लाभान्वित हुए थे। अल्लादिया ख़ाँ से सम्बन्ध-विच्छेद होने के बाद हैदर बख़्श रजबअली के करीब आये थे और उन्होंने रागों तथा बंदिशों के समृद्ध और वैविध्यपूर्ण ज्ञान भंडार में रजब अली को सहभागी बनाया।

कोल्हापुर के छत्रपति की उदारता से रजब अली ख़ाँ बहुत लाभान्वित हुए और उस्ताद ने इसे आदरपूर्ण कृतज्ञता के साथ स्वीकार किया। परिणामस्वरूप उस्ताद ने देश-भर के महत्त्वपूर्ण केन्द्रों की व्यावसायिक यात्रा व्यापक पैमाने पर की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और कई अन्य रियासतों में अपनी उपस्थिति का एहसास कराया और वे जहाँ कहीं भी गये, उन्होंने अपने श्रोतृवर्ग को अभिभूत कर दिया। सुदूर नेपाल में एक समारोह में उन्होंने जल-तरंग पर अपनी कला प्रवीणता से अपनी बहुमुखी विभूति के एक नये पक्ष को उजगार किया। देवास के महाराजा बड़ी पाँती की इच्छाओं का सम्मान कर उस्ताद अन्ततः अपने गृहनगर में बस गये। बहरहाल वे पहले की ही भाँति संगीत सम्मेलनों में भाग लेने के लिए यात्राएँ करते रहे।

पुराने उस्तादों की परम्परा में डूबे हुए रजब अली ख़ाँ संगीत साधना के मूल आधार के रूप में **ओंकार** उच्चारण की साधना करते थे और दूसरों को भी यह करने का उपदेश देते थे। उनके मतानुसार **ओंकार** एक सम्पूर्ण स्वर है और प्रत्येक सुबह **ओंकार** का स्वरोच्चारण करने की सिफ़ारिश किया करते थे। उनकी जीवनदृष्टि उदार थी और उन्होंने बहुत से शिष्य तैयार किये थे। इन शिष्यों में उनके भतीजे **अमानत अली ख़ाँ, कृष्णराव मज़ूमदार, गनपत राव देवस्कर** तथा अन्य अनेक सम्मिलित हैं। उन्होंने अपने पुत्र **राजन ख़ाँ** को वीणावादन और गायन दोनों में ही तैयार किया था।

रजब अली खाँ को पुरस्कार और सम्मान प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए। इनमें 1954 में हिन्दुस्तानी कण्ठ संगीत के लिए दिया गया राष्ट्रपति पुरस्कार भी शामिल है। 1959 में उनके दिवंगत होने से संगीत के एक युग का वास्तव में अंत हो गया। यह दुःख की बात है कि बाद की पीढ़ी के लाभ के लिए उन्होंने वाणिज्यिक रिकार्डों के रूप में रिकार्ड किया गया कोई संगीत नहीं छोड़ा है। यह पता चला है कि केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी में उनके संगीत के कुछ टेप हैं। बहुत सम्भव रूप में वहाँ टेप सिर्फ संग्रह की वस्तु के रूप में जमा हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अमीर खानी शैली

□ □

उस्ताद अमीर ख़ाँ से ख़याल, तराना और सरगम पर चर्चा करना एक आह्लादक अनुभव था। यद्यपि उन्होंने कोई औपचारिक शिक्षा नहीं पायी थी, फिर भी वे उर्दू, फ़ारसी और हिन्दी में प्रवीण थे। उन्हें संस्कृत का भी बुनियादी ज्ञान था। उन्होंने कई भारतीय रहस्यवादी संतों की कृतियों का भी अध्ययन किया था। यह अद्भुत किन्तु सत्य है कि इसी संयोग की वजह से वे उत्तर भारतीय संगीत की विविध शैलियों में कठिन अनुसंधान कार्य करने के लिए प्रवृत्त हुए थे।

अक्सर ही उस्ताद यह प्रदर्शित करने के लिए कि आजकल के ख़्याल अपने मौलिक रूप के भ्रष्ट संस्करण हैं, इतिहास का संदर्भ प्रस्तुत करते थे। उनके मतानुसार **अमीर खुसरो** ने गायन की छः भिन्न-भिन्न शैलियाँ विकसित की थीं : कवाल, कलबना, नक्श, ख़याल और तराना। अमीर ख़ाँ ने ख़याल गायन में शब्दों के प्रयोग पर सर्वाधिक ध्यान दिया था। वे अक्सर कहते थे : "शब्दों को भावना के साथ गाने पर संगीत और अधिक अभिव्यंजनात्मक हो जाता है। ख़याल का काव्यात्मक तत्त्व उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि उसका रागात्मक तत्त्व। अगर कलाकार को एक अच्छा संगीतकार बनना है तो उसमें काव्यात्मक कल्पना-शीलता होना ज़रूरी है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनका विश्वास था कि अपने मौलिक रूप में तराना अध्यात्मवाद से परिपूर्ण था और अपनी बंदिश के माध्यम से गायक ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास करता था। तोम नादिर दानी ओ दानी तननादर अथवा तो दानी अभिव्यक्तियों की आध्यात्मिक महत्ता और अर्थ था। आजकल के तरानों में जो पखावज और तबले के बोल हैं, वे परवर्त्ती काल में उन संगीतकारों द्वारा शामिल किये गये हैं जो फारसी और अरबी से अनभिज्ञ थे।

अमीर ख़ाँ की स्वर साधना के संबंध में संगीत जगत में बहुत ही जानदार बहस उस समय से ही होती रही है, जब उन्हें छठे दशक में पहले-पहल ख्याति मिली थी। कट्टरपंथी परम्परावादियों की दृष्टि में अमीर ख़ाँ की कला सौन्दर्यशास्त्रीय प्रेरणा की आद्य शुद्धता को पुनः आविष्कृत करने के लिए प्राचीन संगीत की ओर लौटने की कोशिश थी। अन्य लोगों के लिए उनकी कला अभिव्यक्ति की नयी दिशाओं और रूपों की खोज थी।

कई अन्य सोचते थे कि अमीर ख़ाँ की दृष्टि बीसवीं सदी के संक्षोभ और आत्मा के अनुरूप नहीं थी और कि उसमें आवेशपूर्ण उच्चारण के गुण नहीं थे। स्वयं उस्ताद का यह दावा था कि वे चौदहवीं सदी के प्रख्यात शारंगदेव की संस्कृत शास्त्रीय कृति संगीत रत्नाकर में उल्लिखित गायन की मेरुखंड शैली का प्रतिनिधित्व करते थे।

वास्तव में, अमीर ख़ाँ एक सिद्ध संगीतकार थे, यद्यपि उन्होंने प्रारम्भिक संगीत शिक्षा अपने पिता **शमीर ख़ाँ** से प्राप्त की थी। **शमीर ख़ाँ** इन्दौर दरबार में वीणा तथा सारंगी के विख्यात कलाकार थे। युवा अमीर ने समकालीन संगीतज्ञों जैसे—**रजब अली ख़ाँ, बशीर ख़ाँ, मुराद ख़ाँ, नासिरुद्दीन डागर** और **कृष्णराव आप्टे** के संगीत को अवचेतन रूप में हृदयंगम किया था। ये संगीतज्ञ अक्सर ही इन्दौर में उनके घर जाया करते थे। बाद में वे अमान अली ख़ाँ के सम्पर्क में आये, जिन्होंने भेंडी बाज़ार घराने की शुरूआत की थी। और भी बाद में, किराना घराने के अब्दुल वाहिद ख़ाँ के संगीत का भी उनकी गायकी पर गहरा प्रभाव पड़ा था।

किन्तु इससे यह अनुमान करना सही नहीं है कि अमीर ख़ाँ का संगीत संस्कारों और प्रभावों का विलक्षण मिश्रण मात्र था। इन संस्कारों ने उन्हें समकालीन गायकी की उल्लेखनीय विशेषताओं को आत्मसात् करने में सहायता दी थी, क्योंकि ये विशेषताएँ उनकी स्वयं की सांगीतिक प्रतिभा के पूरी तरह अनुरूप थीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनकी शैली स्पष्टतः उनकी इतनी अपनी थी कि उन्हें किसी एक घराने या दूसरे घराने में शामिल करना व्यर्थ है। उनकी शैली गायन की अमीर खानी शैली थी।

मैंने पाँचवें दशक के प्रारम्भ में पहली बार उस्ताद को रेडियो पर सुना था। उन्हें साक्षात् सुनने का मौक़ा पन्द्रह वर्ष बीत जाने पर 1955 में बंबई में एक सायं-कालीन संगीत सम्मेलन में मिला। उनके व्यक्तित्व का अभिजात और गाते समय उनका एकदम सीधे बैठना उनके संगीत की सौम्यता के सुखद रूप के अनुकूल था। इस बात पर ध्यान दिया गया कि हर प्रकार की कलाबाजी और विकृति पूरी तरह से अनुपस्थित थी, जबकि उन दिनों **चेहरे बनाना** (भयावह हावभाव करना) एक विशेषज्ञता पूर्ण कला का रूप ले चुका था।

अमीर ख़ाँ की मंद-मंद गायन शैली ख़याल गायकी के क्षेत्र में उनका स्पष्ट और सबसे अलग योगदान था। उनके इस मंद गायन का ध्यानमग्न करनेवाला प्रभाव उनके मुहावरों के बीच अल्पकालिक निःशब्दता के क्षणों से भावनामय हो जाता था। वे कोमल, प्रवाहमय आलाप के सुरीले पद समूह के क्रम से मुग्ध करते। फिर अभिव्यंजनात्मक विराम आता जो शांति के महान् क्षणों की सर्जना करता। यह एक ऐसा अनुभव था जो कि आत्मा को एक साथ ही प्रबुद्ध करनेवाला और एक उच्चतर आधार पर ले जानेवाला था।

उनकी अस्थाई की प्रस्तुति इत्मीनान की गति और सांगीतिक राग के सूक्ष्म उन्मीलन को प्रकट करती थी। और इससे जो रूप उभरकर सामने आता, वह उसके महान् रचनाकार के संघटन तंत्र को प्रदर्शित करता जो बृहत्, किन्तु अत्युत्तम रूप में विभिन्न गायक, बोलतान और तान संरचनाओं से अलंकृत होता था। आकार की यह भव्यता, अभिजात का वह गुण पारम्परिक ख़याल गायकी को अमीर ख़ाँ का एक और विशिष्ट योगदान था।

अमीर ख़ाँ की आवाज़ की कुछ अंतर्निहित सीमाएँ थीं। परन्तु उन्होंने इन कम-ज़ोरियों को इतने लाभकारी और सहज रूप से अपने हित में परिवर्तित कर लिया था कि उससे उनकी अपनी एक शैली उभर आयी थी जो सभी प्रकार के आडम्बर से मुक्त थी और जिसमें प्रज्ञा और भावना का, तकनीक और स्वरसंधान का, प्रतिभा और कल्पना का अद्वितीय सुमिश्रण था।

उन्होंने कला प्रवीणता का प्रदर्शन कभी भी सिर्फ प्रदर्शन करने के लिए नहीं किया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परन्तु अपने राग की मूल भावना पर अपने को केन्द्रित किया। यदि उनके गायन का भण्डार सीमित था, तो वह चुना हुआ भी था, जिसमें ऐसे राग सम्मिलित थे जो गहन और गम्भीर व्यंजनावाले और उनकी आवाज़ के अनुरूप थे। लोक-रंजन की माँगों के आगे उन्होंने कभी भी अपने को समर्पित नहीं किया और हल्की चीज़ों को गाने से सदैव इंकार किया। उनका गीत ऐसा था, जिसमें ध्रुपद का भव्य अभिजात और ख़याल का अलंकृत चमकीलापन था।

स्वभाव और प्रशिक्षण से परिनिष्ठित शैलीकार (क्लैसिसिस्ट) अमीर ख़ाँ ने फ़िल्म संगीत के व्यापक जन प्रभाव को स्वीकार किया था। **बैजू बावरा, झनक झनक पायल बाजे** और **गूँज उठी शहनाई** जैसी फ़िल्मों के लिए उन्होंने नयी रुझान पैदा करनेवाले जो शास्त्रीय गीत दिये थे उससे सिनेमा के माध्यम से पारम्परिक संगीत को लोकप्रिय बनाने की उनकी हार्दिक इच्छा का पता चलता था। हिन्दुस्तानी कण्ठ संगीत के विजिटिंग प्रोफ़ेसर के रूप में अमेरिका और यूनाइटेड किंगडम जैसे देशों की यात्रा से उनके बहुतेरे विदेशी उनके भक्त हो गये और इसके साथ ही उन्हें विदेशी श्रोतावर्ग से स्पृहणीय प्रशंसा प्राप्त हुई।

सातवें दशक की शुरूआत में मैं उस्ताद अमीर ख़ाँ के क़रीब आया, जबकि हम दोनों बंबई में कई संगीत प्रतियोगिताओं में कई बार एक साथ निर्णायक रहे। उस्ताद युवा कलाकारों को सुनना पसन्द करते थे। उनका विश्वास था कि इन कलाकारों को यदि उचित मार्गदर्शन और निर्देशन प्राप्त हो तो ये कलाकार आश्चर्यजनक प्रगति कर सकते हैं। सहिष्णु, दयालु और स्नेहपूर्ण अमीर ख़ाँ का सहज गुण विनम्रता थी। वे बात करने की बजाय सुनना ज़्यादा पसंद करते थे। उनकी संवेदनशीलता जितनी परिष्कृत थी, उतना ही उनका निर्णय उदार था। न उनमें आडम्बर था और न कठोरता। उनके अनेक साथी घटिया ईर्ष्या से पीड़ित रहते थे किन्तु वे स्वयं इससे ऊपर थे। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सम्मान, पुरस्कार और उपाधियों के रूप में उन्हें नाम और ख्याति स्वाभाविक रूप में मिली किंतु वे पक्के सूफी ही बने रहे।

इन सब बातों से महत्त्वपूर्ण है, उनका वह स्थायी प्रभाव जो हमारे गायकों की वर्तमान पीढ़ी और संगीत रसिकों पर पड़ा है। उनकी बाबत यह भी कहा जा सकता है कि संगीत के क्षेत्र में सर्वाधिक विशाल संख्या में अनुयायी उन्हीं के हैं। अजीब बात यह है कि वे इस अनपेक्षित वैशिष्ट्य को पसंद नहीं करते थे। वे ख़याल गायन की परिवर्तनशील प्रवृत्तियों से नाखुश थे। उन्हें आज के ख़याल की ध्वनि कर्कश और बेसुरी लगती थी और सरगम उबा देनेवाला लगता था क्योंकि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह राग की भावना को संज्ञापित करने में असफल रहता था और वह नीरस अभ्यास में विघटित हो जाता था।

अब यह सोचिये कि अमीर ख़ाँ की विभूति कितने विस्तृत क्षेत्र में फैली थी। उसका इतना विस्तार था कि उसे ग्रहण कर पाना समकालीन संगीतकारों और संगीत-प्रेमियों के लिए कठिन प्रतीत होता है। उनके कितने तथाकथित अनुयायियों ने उनकी गायकी की भावना को ग्रहण किया है? अवश्य ही कुछ अपवाद हैं, पर उनकी संख्या अल्प, अत्यंत अल्प है। अधिकांश अनुयायी जो पेश करते हैं, वह उस्ताद की कला का उच्चध्वनिपूर्ण, अव्यावहारिक प्रतिनिधि रूप होता है, उनके अनेक शिष्य जिस तरीक़े से अपने विन्यास को प्राप्त करने की सख़्त कोशिश करते हैं उससे दिमाग़ में **अंधों का हाथी** कहानी की याद हो आती है।

सन् 1974 में दुखदायी परिस्थिति में बासठ वर्ष की उम्र में उनका आकस्मिक देहावसान उन सभी के लिए हमेशा दुखद रहेगा जो शुद्ध और सम्पूर्ण संगीत की फ़िक्र करते हैं। उनके अवसान से जो स्थान रिक्त हुआ है उसकी पूर्ति में बहुत लम्बा समय लगेगा। उस्ताद ऐसे परिनिष्ठित शैलीकार (क्लैसिसिस्ट) थे जो अंतिम समय तक सम्पूर्ण समर्पण की भावना से अपनी कला को निबाहते रहे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डागर बन्धु : ध्रुपद गायकी के ज्योति-वाहक

□ □

संगीत की बातचीत में जितना अधिक दुरुपयोग **जुगलबन्दी** शब्द का हुआ है उतना शायद अन्य किसी का नहीं हुआ है। यदि आज इस शब्द ने अपनी महत्ता या अर्थ खो दिया है तो उसका कारण यह है कि आजकल गायन या वादन में सुना जानेवाला औसत युगल कार्यक्रम अपने सर्वोत्तम रूप में किसी सांगीतिक प्रयोग में दो कलाकारों की सिर्फ़ हिस्सेदारी है, जिसमें वे दोनों कलाकार समानान्तर तरीके से प्रदर्शन करते हैं, एक दूसरे के प्रयास को अनुपूरित या सम्पूरित करना तो दूर, कभी सम पर मिलते ही नहीं। अधिकांश अवसरों पर कलाकार सांगीतिक शिष्टाचार के अभाव को प्रकट करते हैं और एक-दूसरे को पीछे छोड़ने की कोशिश में अक़सर ही अशोभन कलाबाज़ी में जुट जाते हैं। इसके फलस्वरूप कोई मनोरंजन नहीं होता बल्कि संगीत का अशिष्टकरण होता है जिससे ग़ैरजानकारों की तुष्टि करने के अलावा किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती।

जुगलबन्दी के सम्बन्ध में आमतौर पर प्रचलित धारणा सही नहीं है। जुगलबन्दी कोई आधुनिक नवाचार नहीं है। मध्ययुग में ध्रुपद गायन के काल में कण्ठ संगीत में जोड़ी बनाना प्रचलित था और गुरु और शिष्य, पिता और पुत्र या दो भाइयों के युगल गायन के कई उत्कृष्ट उदाहरणों के सन्दर्भ उपलब्ध हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मोइनुद्दीन और अमीनुद्दीन डागर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जहाँ तक जुगलबन्दी का सवाल है उसमें प्रवीणता पाना सरल भी नहीं है । यह एक असाधारण युक्ति है। इस युक्ति में हिस्सेदारी करनेवालों में संकल्पना, दृष्टि और निर्वाह के लिहाज़ से उच्चकोटि के संश्लेषण की आवश्यकता होती है। इसका उद्देश्य संगीत की विशेषताओं और बारीक़ियों को उसी स्वाभाविक रूप में, उसी आत्मस्फूर्त रूप में हृदयंगम कराना होता है जिस प्रकार एकल सांगीतिक प्रस्तुति में होता है। अतः जुगलबन्दी की सफलता धैर्यपूर्वक अभ्यास के अतिरिक्त, इस बात पर निर्भर करती है अपनी प्रस्तुति में कलाकार किस सीमा तक परस्पर समझ और भावात्मक एकता उद्‌घाटित कर सकते हैं।

एक समय था, जब जुगलबन्दी शब्द का नाम लेते ही विशिष्ट ध्रुपद संगीतज्ञों की जोड़ी उस्ताद **नसीर मोईनुद्दीन डागर** और उनके छोटे भाई **उस्ताद नसीर अमीनुद्दीन ख़ाँ डागर** के नाम मन में उभर आते थे। अपनी अप्रतिम सांगीतिक भागीदारी से इन विशिष्ट गायक भाइयों ने इस प्राचीन गायन रूप का, जो उस समय पूरी तरह अधोगति को प्राप्त हो चुका था, उद्धार करने के लिए सर्वाधिक से भी अधिक कुछ किया। उन्होंने इसे सौन्दर्यशास्त्रीय रूप से अधिक आकर्षक बनाने के लिए नया आकार देने का मार्ग प्रशस्त किया था।

वास्तव में जब डागर बन्धुओं ने ध्रुपद धमार शैली में गाया तो हमेशा ही इस शैली ने ताज़गी-भरा स्वर उत्पन्न किया। दोनों ही भाइयों को उल्लेखनीय आवाज़ का वरदान मिला हुआ था। ख़ासकर, मोईनुद्दीन की आवाज़ के स्वर समृद्ध थे, यद्यपि कभी-कभी वे सूक्ष्म प्रभावों को प्रकट करने के लिए अपनी आवाज़ को हल्की करने की कोशिश करते थे। इस तरह का कोमल स्वरोत्पादन अक़सर ही अस्वाभाविक स्वर-सरीखा अनुनासिक लगता था।

परन्तु जहाँ तक उनकी प्रस्तुति के समग्र प्रभाव का सवाल है, इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो जुगलबन्दी उन्हें स्वाभाविक रूप में मिली है। उनका संगीत रूप के लिहाज़ से विस्तृत और भव्य था, जो शास्त्रीय अमूर्तीकरण, अन्तर्भेदी लयों और सघन स्वराघातों से परिपूर्ण था। गायन का जो भी विषय रहे, ये दोनों भाई उसकी स्वर सम्बन्धी संकुलताओं को सुलझाने की मनोरम कोशिश करते। विस्तृति और गतिशील संचलन उनके आलाप की विशेषता थे। वे ऐसी प्रभावशाली संरचना की निर्मिति के लिए बढ़ते जाते जो अभिजात और भव्यता से दीप्त होती थी।

दूसरी ओर, उनके ध्रुपद और धमार आवेश और ओज को प्रकट करते थे। तेज,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
जीवन्त शब्द आकृतियाँ, परिवर्तनशील लय और अप्रत्याशित स्वरावरोह श्रोताओं की चेतना को जाग्रत कर उसे अति उन्नत शिखरों तक ले जाते थे।

उनकी अनन्य उपलब्धि की पृष्ठभूमि में वह महान परम्परा है जो उन्होंने अपने पूर्वजों से उत्तराधिकार में प्राप्त की। मोइनुद्दीन और अमीनुद्दीन दोनों ने ही प्रारम्भिक संगीत शिक्षा अपने यशस्वी पिता **उस्ताद नासिरुद्दीन ख़ाँ डागर** से प्राप्त की थी, जो इन्दौर दरबार में प्रमुख संगीतकार थे। उस्ताद की असामयिक मृत्यु के बाद उन्होंने अपने मामा जयपुर के **रियाजुद्दीन ख़ाँ डागर** और फिर अपने चाचा उदयपुर के **उस्ताद जियाउद्दीन ख़ाँ डागर** से शिक्षा प्राप्त की।

डागर बन्धु 1956 से पाँच वर्ष तक श्रीराम भारतीय कला केन्द्र, नयी दिल्ली, से सम्बद्ध रहे थे। इस अवधि में उन्होंने मालती-माधव, कुमार-सम्भव और शान-ए-अवध जैसे विश्वविख्यात नृत्य नाटकों के लिए संगीत तयार किया। ध्रुपद और धमार के प्रसार के लिए उन्होंने दूर-दूर तक विदेश-यात्राएँ कीं। 1964 में वेनिस, बर्लिन और पेरिस में अन्तर्राष्ट्रीय उत्सवों में प्रदर्शन प्रस्तुत किया। वे पहले भारतीय संगीतकार थे जिन्हें यह गौरव मिला था और इस तरह उन्होंने ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य किया था। इस दौरे में युनेस्को ने उनके संगीत का एक लांग प्ले रिकार्ड भी निकाला।

इस परिवार पर एक बार फिर वज्रपात हुआ जब मोइनुद्दीन ख़ाँ की असामयिक मृत्यु हुई। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि इस त्रासदी से उत्तर भारतीय संगीत और ख़ासकर ध्रुपद परम्परा पर भी वज्रपात हुआ। युवा अमीनुद्दीन को जिस भावात्मक और सांगीतिक सदमे को सहना पड़ा उसे उन सबने भी महसूस किया था और आज भी कर रहे हैं जिन्हें उन दोनों भाइयों का उन्नयनकारी युगल गान सुनने का सौभाग्य मिला था।

परन्तु अमीनुद्दीन ख़ाँ ने अपनी परम्परा को आगे ले जाने का निर्णय लिया। उन्होंने अपने दिवंगत भाई के नाम पर एक गुरुकुल आश्रम स्थापित किया। इस आश्रम में सच्ची गुरु-शिष्य परम्परा में डागर-वाणी शैली में आलाप, ध्रुपद और धमार की निःशुल्क शिक्षा दी जाती है। इस शिक्षा में ध्वनि के संवर्धन पर विशेष जोर दिया जाता है। सन् 1971 में उन्होंने यूरोप और अमेरिका का अकेले ही दौरा किया और 40 कार्यक्रम दिये, जो बहुत ज्यादा सफल रहे। सन् 1976 में उन्हें ईरान में अत्यन्त प्रतिष्ठापूर्ण **शिराज उत्सव** में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया था। सन् 1978 में रोम उत्सव में उनकी संगीत सभाओं की भी बहुत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रशंसा की गयी ।

डागर बन्धु से मेरी पहली मुलाकात 1955 में रेडियो संगीत सम्मेलन के सिल-सिले में मेरी दिल्ली यात्रा के दौरान हुई थी । राग प्रस्तुति में संगीत और साहित्य के मूल्य पर उनसे चर्चा करना सदैव ही एक अविस्मरणीय अनुभव था । उन दिनों ऐसे मौकों पर अमीनुद्दीन चुप रहना ही पसन्द करते थे । ख़ासकर उस मुलाक़ात के समय तो वे पूरी तरह चुप रहे । बड़े भाई ही विभिन्न विषयों पर अपने मौलिक विचारों से आपको अभिभूत कर देते थे । एक दृष्टि से, मोईनुद्दीन ख़ाँ परम्परावादियों के मध्य सुधारवादी थे । वे एक पक्के ध्रुपदिये थे, जो नये क्षेत्रों में प्रयोग करने के लिए उत्सुक थे ।

दिल्ली के कलाकेन्द्र के लिए उनके द्वारा तैयार पूर्वोल्लिखित नृत्य-नाट्यों में उनके योगदान से यह तथ्य अच्छी तरह सिद्ध हो जाता है । आदतन अपने दाहिने हाथ को फटकारते हुए वे आपसे पूछते, "इसमें क्या ख़राबी है, यदि बदलते समय के अनुरूप ध्रुपद के पुरुष तत्त्व को हटाकर उसका ग़ज़ल या गीत की रोमानी छवि और लोकगीत की जीवन्त प्रेरणाओं से स्वीकार्य संलयन किया जाये?"

अमीनुद्दीन अपने भाई के इन विचारों से सहमत हैं। उनके समान ही अमीनुद्दीन कहते हैं कि संगीत शिक्षा उस परम्परा में दी जानी चाहिए, जिसमें गुरु अपने शिष्य को बिना किसी भौतिक प्रतिदान की अपेक्षा किये तैयार करता है ।

पारम्परिक संगीत की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य की चर्चा करते हुए एक बार उन्होंने मुझसे कहा था कि उनके मतानुसार पारम्परिक संगीत वास्तव में एक विशेष वर्ग के श्रोताओं के लिए है जो उसके सौन्दर्यशास्त्रीय मूल्यों को समझ और सराह सकें । उनका साग्रह कथन है, यह संगीत आम जनता के लिए नहीं है । पश्चिमी देशों में नृत्य-नाट्य, ऑपेरा और शास्त्रीय संगीत के लिए अलग-अलग श्रोता वर्ग हैं । इसके विपरीत, भारत में शास्त्रीय संगीत की सभाओं में मिला-जुला श्रोता वर्ग उपस्थित होता है। उन्होंने कहा कि इसकी वजह से संगीत को सराहने और उसका गुण-दोष विवेचन करने के सही मानदण्ड के विकास में विघ्न पड़ता है। उन्होंने आगे कहा कि कलाकार को भी आत्मावलोकन का गुण विकसित करना चाहिए। यही गुण अन्ततः उत्तर भारतीय संगीत का स्तर सुधार सकता है।

पश्चिम में भारतीय शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाने के विषय में चर्चा करते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुए इसी मनःस्थिति में उस्ताद ने कहा है कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारतीय कलाकारों का विदेशों में स्थायी रूप से रहना ग़लत है। उन्होंने जोर देकर कहा कि "यदि वे ऐसा करते हैं तो कला पर अनेक तरीक़ों से विपरीत प्रभाव पड़ना सुनिश्चित है।"

अमीनुद्दीन खाँ अब 58 वर्ष के हैं। वे दार्शनिक वीतरागता वाले अविवाहित हैं। जीवन में उनकी दो ही अभिरुचियाँ हैं : अपना संगीत और भक्ति साहित्य।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कृष्णराव शंकर पण्डित : ग्वालियर घराने में अग्रगण्य

□ □

"पिछले 150 वर्षों में जितने भी घरानों ने प्रतिष्ठा अर्जित की है, उनमें ग्वालियर की ख़याल गायकी सबसे अगुआ है। प्रत्येक घराने की अपनी विशेषताएँ हैं परन्तु ग्वालियर की ख़याल-शैली की अष्टांग प्रधान विशेषता किसी में नहीं है।"

यह बात कृष्णराव शंकर पण्डित अपने घराने के प्रति औचित्यपूर्ण गर्व की भावना से जोश के साथ कहते हैं। 88 वर्षीय पण्डितजी उस घराने के सर्वाधिक वयोवृद्ध जीवित वरिष्ठतम सदस्य हैं, जिसे सर्वसम्मति से सबसे पुराना ख़याल घराना माना जाता है। अतः उनसे चर्चा करना रंजनकारी और ज्ञानवर्द्धक है।

अनेक वर्ष पहले जब वे एक बार अल्प प्रवास पर बम्बई आये थे तो उनसे मेरी पहली मुलाक़ात हुई थी। उस मुलाक़ात में उन्होंने मुझसे पूछा, "क्या आप जानते हैं कि अष्टांग प्रधान से मेरा क्या तात्पर्य है?" फिर मुझसे किसी उत्तर की अपेक्षा किये बिना ही पण्डितजी ने अपने ही सवाल का उत्तर देना शुरू कर दिया : "सिर्फ़ मेरे घराने में संगीत के आठ गुण हैं। ये हैं आलाप, बोल-आलाप, बोलतान, तान और लयकारी के विभिन्न रूप, मींड, गमक और मुरकी। ये सब मिलकर मेरी ख़याल गायकी के प्रमाण चिह्न की रचना करते हैं। वास्तव में, मींड और बेहेलावा उसके प्राणतत्त्व हैं। यह एक अत्यन्त जटिल शैली है। यद्यपि बाद में कई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घरानों के समर्थक इसे सरल और आरम्भिक क़िस्म का बताते हैं। यह शैली कर्ण-प्रिय है अतः यह सरल प्रतीत हो सकती है। परन्तु देखिये, यह अच्छी तरह तैयार अनुभवी व्यक्ति के दिमाग़ को चकरा भी सकती है।"

"और क्या आप इस गायकी की लोकप्रियता का राज जानते हैं?" पण्डितजी ने दूसरा सवाल पूछा और खुद ही उसका जवाब दिया: "ख़याल गायकी अपने प्रस्तुतीकरण के दौरान ध्रुपद, धमार, ठुमरी, टप्पा और कुछ अंशों में तराने के गुणों को उभारती है। इसी वजह से यह शैली ख़याल-गायन की अन्य सभी शैलियों से एक दर्जा ऊपर है।"

"पण्डितजी, संगीत की बोलचाल की भाषा में जिसे बड़ा ख़याल कहा जाता है, उसे विलम्बित लय में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यह लय प्रस्तुतीकरण की धीमी गति का संकेत देती है। परन्तु मैंने पाया है कि इस घराने के अधिकांश गायक अपनी रचनाएँ मध्यलय अथवा मध्यम गति में प्रस्तुत करते हैं। यह क्यों?"

"ख़याल एक गीत रूप है। यदि इसे विलम्बित लय में प्रस्तुत किया गया तो वह अपना महत्त्व और अर्थ निश्चय ही खो देगा। गीत के पाठ की विशेषता खत्म हो जायेगी। फिर आप किस तरह शब्द, धुन और ठेका के उस समंगी संलयन को प्राप्त करने की आशा करते हैं जो कि इस घराना-गायकी का सार तत्त्व है।"

"पण्डित जी, आपने टप्पा-गायन में भी विशेषज्ञता हासिल की है। आपके घराने के और भी कई कलाकार इस कठिन गायन शैली में प्रवीण हैं। क्या आपका टप्पा वाराणसी के टप्पे से अलग है, और अगर है, तो किस तरह?"

"हाँ, उसमें अवश्य ही अन्तर है। हमारा टप्पा ख़याल उन्मुखी है, जबकि वाराणसी का टप्पा, ठुमरी उन्मुखी है। इसके अलावा, हमारी संगीत सम्पदा में विविध प्रकार के चतरंग और त्रिवट शामिल हैं।"

पण्डितजी से मेरा प्रारम्भिक परिचय रेडियो के माध्यम से हुआ था, जैसा कि अधिकांश संगीत प्रेमियों के साथ होता है। मैं उन दिनों किशोर था और रेडियो सुनने का मुझे बहुत ज्यादा शौक था। मैं आकाशवाणी, दिल्ली से प्रसारित उनके संगीत कार्यक्रम को शायद ही कभी चूका हूँ। उन्हें एक पूरी संगीत बैठक में सुनने का मौक़ा बहुत बाद में 1949 में जाकर मिला था, जबकि उन्हें म्यूजिक सर्कल, बंबई द्वारा प्रस्तुत किया गया था।

लम्बे और कृशकाय पण्डितजी अपनी सामान्य वेशभूषा, लम्बे कोट, धोती और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कशीदा की हुई टोपी धारण किये हुए थे । वे पूरी तौर पर अभिजातवर्गीय ब्राह्मण दिखाई देते थे । उनके चेहरे से रुखाई टपकती थी जिससे मुख-छवि आकर्षक नहीं लगती थी । वे बिलकुल सीधे चलते हुए मंच पर आये और उन्होंने कठोर यौगिक मुद्रा में अपना आसन ग्रहण किया और प्रारम्भिक बोल 'सोहे लर' के उच्चारण से राग कामोद में अपना ख़याल शुरू कर दिया । इस प्रस्तुति का प्रभाव उत्तेजित करनेवाला था । राम नारायण की सारंगी और अल्ला रखा के तबले की संगत में यह तीन घण्टे का गायन शुद्ध और उन्नयनकारी संगीत का अतिसंतोषकारी प्रदर्शन था ।

इस गायन से उनकी व्यक्तिगत गायन शैली के बहुतेरे पक्ष पूरी तौर पर उभर कर आये : स्वरों के शक्तिशाली आक्षेप के साथ उच्चारण की गंभीर पद्धति, अन्तर्भेदन की क्षमता से युक्त लय और भाव-चित्रण की गहन विधि । इस गायन में अभिव्यक्ति की प्रत्याशित और अप्रत्याशित मौलिकता भी थी जो कि उनकी शैली की विशिष्टता के अनुरूप थी ।

पण्डितजी को मैंने अंतिम बार 1962 में सुना था जब वे अपने एक वरिष्ठतम शिष्य शरद्चन्द्र आरोलकर की षष्ठिपूर्ति के सिलसिले में आयोजित समारोह में भाग लेने के लिए ग्वालियर से बंबई आये थे । संगीत सुनाने के लिए 79 वर्षीय गुरु और स्वयं वृद्ध हो रहे शिष्य का एक मंच पर एक साथ उपस्थित होना एक महिमामय संगीत परम्परा का सच्चा प्रतिबिम्बन था और इसलिए वह भाव विभोर करनेवाला भी था ।

उस रात-भर चलनेवाली संगीत-सभा में सबसे अन्त में पण्डितजी का गायन हुआ था । खचाखच भरे सभागार में पण्डितजी ने यह प्रदर्शित किया कि कठोर अनुशासन से किस तरह उम्र पर विजय पायी जा सकती है । ललित में विलम्बित, द्रुत और तराना के बाद उन्होंने जोगिया मांड सुनाया और ठुमरी और तराना सुनाकर अपने प्रदर्शन का समापन किया था । ये सबके सब मेरी स्मृति में आज भी गूंज रहे हैं ।

इस बीच की अवधि में पण्डितजी को सुनने का मुझे कई बार मौक़ा मिला और उनसे मिलकर हिन्दुस्तानी संगीत पर चर्चा करने के भी अनेक अवसर मिले। ऐसे ही एक मौक़े पर मैंने उनसे ग्वालियर घराने के विभिन्न कलाकारों की गायन शैली में पायी जानेवाली विशिष्ट विविधता की बात की ।

पण्डितजी ने अपने व्यक्तित्व के अनुकूल स्पष्टता से इस विविधता की बात को स्वाभाविक कहकर खारिज कर दिया । उनका कहना था कि किसी भी निजी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शैली के उद्भव और विकास में व्यक्तित्व का तत्त्व महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहता है। पर उन्होंने इस तथ्य पर ज़ोर दिया कि उनके घराने के कलाकार आमतौर पर निर्दिष्ट अनुशासन के भीतर ही अपनी शैली विकसित करते हैं, जबकि ऐसा लगता है कि वे उसके बुनियादी सिद्धांतों से हट गये हैं।

परम उत्कृष्ट वार्ताकार पण्डितजी ने मुझे अपने घराने की सांगीतिक वंशावली बतलायी। पीर मोहम्मद, नत्थन पीर बख़्श, हस्सू ख़ाँ, हद्दू ख़ाँ, और नत्थू ख़ाँ, ग्वालियर की ख़याल गायकी के प्रारम्भिक दिनों के अगुआ थे। इनमें से प्रत्येक की अपनी शिष्यपरम्परा थी, जैसे—बालकृष्ण बुवा इचल करंजीकर, वासुदेव बुवा जोशी, बाबा दीक्षित और कई अन्य। पण्डितजी ने बताया कि उनके कट्टर-पंथी परिवार में उनके पिता पहले व्यावसायिक संगीतकार थे। वे हद्दू ख़ाँ के शिष्य थे। पण्डितजी के गुरु उनके पिता ही थे।

पण्डितजी ने ज़ोर देकर कहा कि यह गर्व की बात है कि अपनी विस्तृत गुरुशिष्य परम्परा के साथ ग्वालियर घराने ने विविधता में एकता को अर्जित किया है।

कृष्णराव शंकर पण्डित एक ऐसे संगीतज्ञ हैं जो अपने घटनापूर्ण व्यावसायिक कैरियर पर सही ढंग से संतोष कर सकते हैं। उनके पिता ने उन्हें छः वर्ष की आयु में संगीत सिखाना शुरू किया था, अपने पिता के साथ वे पहली बार ग्यारह वर्ष की आयु में बंबई में सार्वजनिक प्रदर्शन देने के लिए उपस्थित हुए थे, 1914 में ग्वालियर में संगीत विद्यालय की स्थापना हुई, देश में एक सर्वप्रमुख गायक के रूप में उन्हें जल्दी ही मिली ख्याति, संगीत के क्षेत्र में 50 से अधिक वर्ष के दौरान उन्हें मिली प्रशंसा और ग्वालियर सहित अनेक राजाओं से मिला संरक्षण, और पुरस्कारों तथा उपाधियों के रूप में मिली राष्ट्रीय मान्यता—इन सब बातों से पडिण्तजी अपने आप में एक विशिष्ट कोटि के संगीत-पुरुष सिद्ध होते हैं।

पडिण्तजी ने बहुत बड़ी संख्या में शिष्यों को तैयार किया है। इनमें उनके तीन पुत्र भी हैं। ये सब अपनी क्षमता के साथ पण्डितजी की परम्परा का निर्वाह कर रहे हैं। जब मैंने उनसे पूछा कि शास्त्रीय संगीत के भविष्य के संबंध में वे क्या सोचते हैं, तो उन्होंने गूढ़ व्यंजनापूर्ण उत्तर दिया कि हम सब तीव्र गति से प्रगति करनेवाले संसार में रह रहे हैं, जिसमें हर नयी पीढ़ी के साथ शास्त्रीय संगीत की सराहना निरन्तर कम-से-कम होती जा रही है।

कितनी दुखद, पर कितनी सही बात।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

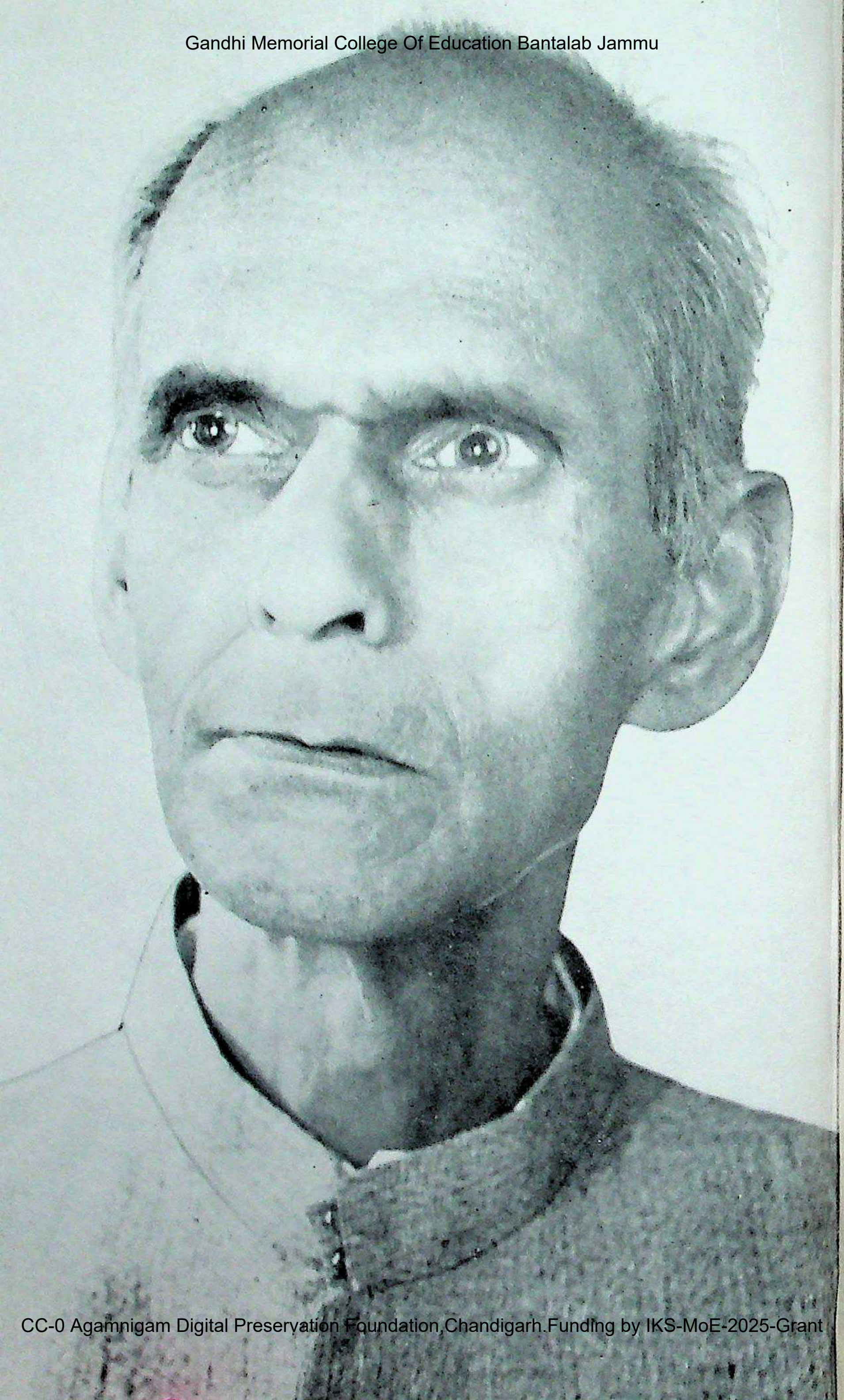

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आरोलकर : सबसे अलग संगीतज्ञ

□ □

"वह किसी अन्य की तरह नहीं गाते और न कोई दूसरा उनके समान गाता है।" ग्वालियर घराने के 69 वर्षीय प्रवीण कलाकार **पण्डित शरदचन्द्र आरोलकर** के संगीत के संबंध में बंबई के एक अभावुक रसिक ने मत व्यक्त किया। पण्डित आरोलकर को 1979 में हिन्दुस्तानी कण्ठसंगीत के लिए राष्ट्रपति पुरस्कार प्रदान किया गया है। वे लोग इस अभिव्यंजनात्मक सूक्ति का अर्थ तुरंत जान जाते हैं जो पण्डितजी के व्यक्तित्व के भ्रांतिजनक पक्षों को अच्छी तरह से जानते हैं।

वास्तव में पण्डितजी सबसे अलग संगीतज्ञ हैं। बचपन में उनकी आकांक्षा संन्यासी बनने की थी। पर वे संगीतकारों के संगीतकार बन गये। और संगीतज्ञ बन जाने के बाद भी, उन्होंने संगीत सभा के मंचों से दूर रहने का निर्णय ले लिया।

यह बात भी नहीं है कि पण्डितजी ने संगीत-संसार से पूरी तरह संन्यास ले लिया है। इसके विपरीत, वे उन लोगों को उपकृत करने के लिए सहर्ष तैयार रहते हैं जो शुद्ध और स्वस्थ संगीत के इच्छुक है। फिर चाहे वे लोग गम्भीर रुचि वाले युवा हों जो उनके मार्गदर्शन से लाभान्वित होना चाहते हों या फिर गम्भीर कला-पारखी। वास्तव में, उन्हें छोटे सभागारों में अनौपचारिक बैठकों में अनेक बार सुना जा सकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने पण्डित आरोलकर को सर्वप्रथम कोई 15 वर्ष पहले बंबई के एक परिवार के बैठकखाने के सुखद वातावरण में सुना था, जब उन्होंने कई विशिष्ट संगीतकारों, संगीतज्ञों, लेखकों, रसिकों और समीक्षकों के छोटे से किन्तु विवेचनशील श्रोतृवर्ग के समक्ष क़रीब चार घण्टे तक गायन किया। वे शरीर से कमज़ोर किन्तु आन्तरिक शक्ति से उल्लसित नजर आ रहे थे। उन्होंने सधी हुई मधुर ध्वनि में लालित्य और प्रवाह, निर्दोष स्वरविन्यास और अचूक शैली, लय तथा गति अभिव्यक्त करते हुए स्वाभाविक रूप से सहज गायन किया। राग विस्तार की प्रक्रिया में नवाचार की जिस विदग्धता से वे नवीनतर से नवीनतर स्वर-विन्यास रचते थे, वह सच में विस्मयकारी थी।

उनकी प्रेरणात्मक व्यग्रता और वैसे ही उनका श्वास नियंत्रण, सौन्दर्यशास्त्रीय संवेदनशीलता और बुनियादी सिद्धांत की समझ से गायकों की युवा पीढ़ी के समक्ष एक संयुक्त चुनौती उपस्थित होती लगती थी। इनमें से बहुतेरे गायक (अपने सुप्त श्रोताओं की ही भाँति) प्रस्तुतीकरण के ज़्यादा गंभीर गुणों की बजाय तकनीक की सतही बातों से अकसर सम्मोहित रहते हैं।

उनकी संगीत सम्पदा भी उनकी महिमामय परम्परा की अनन्य प्रतिनिधि स्वरूप थी। वह न सिर्फ़ समृद्ध थी परन्तु कल्पनाशील अभिव्यक्ति की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण भी। उन्होंने टप्पा, दायरा और ठुमरी में वैचारिकता और अन्त.प्रज्ञा का जितना वैविध्य प्रकट किया उतना ही वैविध्य उन्होंने ख़याल और तराना विषयों में भी प्रकट किया। उनका संगीत सुरुचिपूर्ण अभिकल्पना का था, जो अपनी औपचारिक अभिव्यंजना में सूक्ष्म और सुन्दर की सहज संवेदना प्रकट करता था। उन्होंने कुछ भी गाया, उसमें हर अन्तराल सोद्देश्य था, हर स्वर स्पष्ट रूप से विवेचित था और हर मुहावरा रचनात्मकता की दृष्टि से उल्लेखनीय था। उनकी रागाभिव्यंजना उच्च शास्त्रीयता की आत्मिक अभिव्यक्ति करती थी, जबकि सुगम संगीत की रचनाएँ स्वरोच्चारण की संवेदनशीलता और भावात्मक कथ्य दोनों ही दृष्टि से उल्लेखनीय थीं। द्रुत रचनाओं में पण्डितजी ने स्वयं को ताल के धर्मयोद्धा और लय के तीर्थयात्री के रूप में प्रदर्शित किया।

आरोलकर का संगीत शायद अपनी सांकेतिक अथवा शायद अपने अतिसूक्ष्म कल्पनादर्शी आकर्षण की वजह से ही हमारी चेतना को इतना प्रबुद्ध करनेवाला है। वे जब कभी गाते हैं, श्रोता यह अनुभव करता है कि सौन्दर्य के किसी उच्च आदर्श के साथ उनके सांगीतिक भाव का तादात्म्य है और वे समर्पण की भावना के साथ अपने श्रोतृवर्ग से सम्पर्क बनाने का प्रयास कर रहे हैं। अपनी कला के प्रति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आरोलकर की इस दृष्टि में जो आध्यात्मिक तत्त्व है, वही उनका कला का वैशिष्ट्य है। यह गुण है जो उनके गायन को अनुप्रमाणित करता है।

उनके संगीत में आध्यात्मिकता का यह तत्त्व, अनासक्त तीव्रता का यह गुण उनकी प्रतिभा में अन्तर्निहित था, जब उन्होंने सांगीतिक आस्था को सांगीतिक कैरियर से कहीं बड़ी चीज़ के रूप में प्राप्त करने का निर्णय लिया था। शरद्चन्द्र आत्माराम आरोलकर का जन्म कराँची में 2 दिसम्बर, 1912 को हुआ। उनके घर का वातावरण संगीत के लिए पूरी तरह प्रेरक नहीं था। उनके पिता एक सैन्य अधिकारी थे, जिनकी संगीत में कोई रुचि नहीं थी, वे आध्यात्मिक अध्ययन में विश्रांति प्राप्त करते थे। बहरहाल, शरद्चन्द्र में संगीत के प्रति तीव्र उत्साह था जो अनेक रूपों में अभिव्यक्त होता था। बालक शरद्चन्द्र ने हारमोनियम और तबला बजाने में दक्षता प्राप्त कर ली थी, और वे संगीत सभा को सुनने का कोई मौका नहीं छोड़ते थे। महान् संगीतकार रहमत ख़ाँ के रिकार्ड किये संगीत को सुनकर उन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और अपने बुजुर्गों की सलाह के बहुत विपरीत उन्होंने पण्डित विष्णु दिगम्बर के शिष्य पण्डित लक्ष्मण राव बोडस का शिष्यत्व ग्रहण किया।

इस बीच कम उम्र में ही युवा शरद ने बृहत अध्ययन भी किया। उनके घर में आध्यात्मिक विषय की पुस्तकों का अच्छा संग्रह था। उन्होंने इन ग्रंथों का अध्ययन किया। थोड़े समय बाद ही उन्होंने यह महसूस किया कि वे एक नये क्षेत्र में पूरी तरह रम गये हैं। आध्यात्मिक अध्ययन का उनके मन पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि तेरह वर्ष की उम्र में ही वे शालेय अध्ययन और संगीत शिक्षा को छोड़कर (महाराष्ट्र में पुणे के निकट) लोनावला भाग गये। वहाँ उनकी मुलाकात प्रख्यात योगाचार्य और महान् रहस्यवादी स्वामी कुवलयानन्द से हुई परन्तु स्वामीजी ने उनसे अपनी संगीत शिक्षा को जारी रखने के लिए कहा। स्वामीजी ने उन्हें आश्वस्त किया कि इससे उन्हें आध्यात्मिक शांति भी प्राप्त होगी।

आरोलकर तुरंत ही ग्वालियर आ गये, जिसे उचित रूप में ही उत्तर भारतीय संगीत की संवर्द्धन शाला माना जाता है। ग्वालियर में उन्हें कृष्णराव शंकर पण्डित, एकनाथ पण्डित और कृष्णराव मुले जैसे प्रख्यात संगीतज्ञों का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। उनसे उन्होंने खयाल, टप्पा, ठुमरी तथा अन्य गायन शैलियों का तकनीक और सौन्दर्यशास्त्र सीखा। अपने गुरुओं से प्राप्त आशीर्वाद के साथ उन्होंने अपरिमित परिश्रम और अद्वितीय निष्ठा को जोड़ दिया है। यदि उनके संगीत ने एक उच्चतर आध्यात्मिक और बौद्धिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तकनीक पर सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया है तो उसका कारण यह है कि उनके संगीत ने एक सुदीर्घ और कठोर तपश्चर्या के उपरांत स्वरूप ग्रहण किया है। इस प्रक्रिया में उन्होंने 600 अनन्य और प्रामाणिक रचनाओं की विस्तृत सम्पदा को अर्जित किया है। इसमें ध्रुपद, धमार और ख़याल की शास्त्रीय रचनाओं से लेकर टप्पा, ठुमरी और दादरा जैसी उपशास्त्रीय रचनाएँ तक शामिल हैं। उन्होंने स्वयं 350 गीतों की रचना की है।

एक गायक के रूप में आरोलकर की सर्वतोमुखी प्रतिभा की केसरबाई केरकर, विलायत हुसैन ख़ाँ, शम्सुद्दीन ख़ाँ और एस. एन. रातनजनकर जैसी अनेक महानतम विभूतियों ने भरपूर प्रशंसा की है। बहुत से लोगों को यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि किशोरी अमोनकर, जितेन्द्र अभिषेकी और शरद साठे जैसे आज के लोकप्रिय गायकों ने पण्डितजी के मार्गदर्शन से लाभ प्राप्त किया है। स्वयं की तालीम की चर्चा करते हुए पण्डित आरोलकर कहते हैं कि उनके पहले दो गुरुओं की दृष्टि पारम्परिक थी और वे उनसे संगीत के विषय में चर्चा नहीं करते थे। उन्होंने बस गायन किया और सीखा। वे प्रख्यात संगीतज्ञ और महान् बीनकार पण्डित मुले के पास व्याख्या के लिए जाया करते थे। उनके मतानुसार अच्छी तालीम वह है, जो कलाकार का विकास करे। और इस उद्देश्य के लिए उसे कठिन मेहनत करनी पड़ती है। सामनेवाले को चुप कर देनेवाली स्पष्ट-वादिता के साथ पण्डितजी अक्सर कहते हैं, "मेरे पास बहुत लोग सीखने के लिए आ चुके हैं। जो मेरे ज्ञान को हृदयंगम नहीं कर सके, वे छोड़कर चले गये। यह मेरे लिए बिलकुल ठीक है। मैंने कभी भी आत्म-विज्ञापन नहीं किया है। मैं शांति के साथ रहना चाहता हूँ।"

'उत्तर भारत की एक मात्र प्रामाणिक परम्परा' के रूप में ग्वालियर घराने से पण्डितजी की संलग्नता एक प्रकार से दुराग्रही लगती है। इस संबंध में कहीं ज़्यादा कठोर और निर्मम टिप्पणी की गयी है। परन्तु उनका तर्क है कि वे ग्वालियर गायकी के प्रति अपनी निष्ठा एक घराने के रूप में नहीं स्वीकार करते हैं बल्कि इसलिए करते हैं कि उस तकनीक में वे पारम्परिक गायन के बुनियादी तत्त्वों नामतः, शब्द, धुन और लय के उत्कृष्ट सामंजस्य को पाते हैं। वे आग्रहपूर्वक कहते हैं कि "किसी भी घराने से मेरी कोई लड़ाई नहीं है, परन्तु व्यवहार-वैचित्र्य का सिर्फ़ अनुकरण करने से ही कोई घराना नहीं बनता है।"

ख़ायल गायकी के भविष्य की बाबत चर्चा करते ही पण्डितजी दुखी हो जाते हैं। वे कहते हैं, "उत्तर भारतीय संगीत को ख़याल ग्वालियर की बहुमूल्य विरासत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के रूप में प्राप्त है, परन्तु उसका तीव्रता से ह्रास हो रहा है । ख़याल, ठुमरी, ग़ज़ल और पहाड़ी के तकनीकों के एकीकरणवाले संगीत को प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति से उसकी प्रतिभा ख़तम हो जायेगी ।" इससे यह बात साफ़ हो जाती है कि पण्डितजी समकालीन सांगीतिक गतिविधियों से अलग क्यों हो गये हैं । उनके सरीखे निष्ठावान संगीतकार के लिए कलाकारी सजावट और मन की मौज द्वारा संगीत का अवमूल्यन करना कल्पनातीत है ।

मैंने एक बार उनसे पूछा, "तब अच्छा संगीत क्या है ?"

"यह एक पेचीदा सवाल है । मेरे विचार से अच्छे संगीत का अनिवार्य गुण यह है कि उसमें हृदय को छू सकने की क्षमता होनी चाहिए और हृदय को छूने की प्रक्रिया में उसे श्रोता की मानवीयता का विस्तार करना चाहिए। संगीत को श्रोता को आनन्द देना चाहिए, उसका भावात्मक, आध्यात्मिक और प्रबुद्धात्मक संवर्द्धन करना चाहिए और जीवन के उसके समग्र आनन्द में वृद्धि करनी चाहिए ।"

"वर्तमान अहितकारी प्रवृत्तियों को उलटने के लिए क्या किया जाना चाहिए ?"
"श्रोताओं को कला मूल्यों की शिक्षा देने के लिए संगीतकार को रवैये और व्यवहार की अलिखित संहिता से मार्गदर्शन लेना चाहिए । उसे सुबुद्ध श्रवण और संतुलित निर्णय द्वारा अपनी सक्रिय हिस्सेदारी को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए । इस परिस्थिति में समीक्षकों और श्रोताओं को संगीतकारों की भाँति ही एक सामूहिक भूमिका निवाहना है । तब ही संगीत अपने भूतकाल को न्यायसंगत सिद्ध कर सकता है और सांस्कृतिक एकीकरण में स्थायी योगदान दे सकता है ।"

बंबई पण्डितजी की तीस वर्ष से भी अधिक समय तक कर्मभूमि रही है । वे अविवाहित हैं और अनोखे ढंग से एकाकी जिन्दगी बसर करते हैं । उनमें सबसे विलग होने और आत्म-परीक्षण करने की प्रवृत्ति है । वे प्रचार से बचते हैं और समीक्षकों से दूर रहते हैं । कुछ लोग उन्हें भ्रमकारी व्यक्ति कहते हैं, और कुछ दूसरे लोगों के लिए वे दुर्दमनीय सिद्धांतवादी और अटल शुद्धतावादी हैं । यह उनके व्यक्तित्व की प्रवृत्ति है कि वे अन्तर्मुखी हैं । परन्तु उपयुक्त मनःस्थिति और संदर्भ मिलने पर उनके समान उल्लसित सम्भाषण-पटु संगीतकार गिने-चुने ही मिल सकते हैं ।

सादा जीवन और सरल आदतों वाले पण्डित आरोलकर कठोर अनुशासनप्रिय भी हैं । यद्यपि वे सदैव बीमार रहते हैं, जीवन के श्रेष्ठकाल में वे लकवे और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
यक्ष्मा जैसी गंभीर बीमारियों को भुगत चुके हैं, फिर भी वे अपनी दिनचर्या का कठोरता से पालन करते हैं। इसमें आध्यात्मिक साधना, रियाज़, यदि तबीयत ठीक रहे तो शिष्यों को शिक्षण और दर्शनशास्त्र तथा रहस्यवाद संबंधी ढेर-सा अध्ययन शामिल हैं। हस्तरेखा विज्ञान, आयुर्वेद, होम्योपैथी और खेलकूद में अपनी सामान्य रुचि को भी बनाये रखे हैं। वे शिरडी के श्री साईं बाबा के पक्के भक्त हैं। उनके लिए संगीत धर्म है, योग है, मन को शान्ति प्रदान करने में योग्य गहरे विश्वास और निष्ठा की अभिव्यक्ति है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुमार गंधर्व : विद्रोही विभूति

□ □

क्या हमारे पारम्परिक संगीत ने विकास करना समाप्त कर दिया है ? क्या वह नये प्रयोगों और नवाचारों से मेल बिठा सकता है ? आख़िरकार क्या वह अपने मूल तत्त्व और प्रस्तुति में से नितान्त प्रबुद्धता की मुद्रा को छोड़ देगा ?

आज के मिश्रित श्रोतृ वर्ग में सम्मिलित नितांत बौद्धिक लोग जब भी **कुमार गंधर्व** का गायन सुनते हैं, तब ये सवाल उनके मन में अक्सर ही उठते हैं।

वास्तव में आज कुमार गंधर्व को जितनी ज़बरदस्त प्रशंसा प्राप्त है, उतनी हिन्दुस्तानी संगीत के समकालीन कलाकारों में से बहुत कम को ही प्राप्त हुई है। कुमारजी को शास्त्रीय संगीत में अग्रगामी (अवाँ गार्द) आन्दोलन के अगुआ के रूप में सही तौर पर ही अभिनन्दित किया जाता है। इस क्षेत्र में उन्होंने जो नयी लीक चलायी है, सांगीतिक अभिव्यक्ति के लिए जितनी विदग्धता से नयी शैली विकसित की है, वह उन्हें हमारे समय का एक सर्वाधिक विवादास्पद गायक भी बनाती है।

उनका संगीत एक रूढ़िमुक्त दृष्टि इस अर्थ में प्रकट करता है कि उन्होंने किसी भी घराने के आधिपत्य को स्वीकार करने से पूरी तरह से इनकार कर दिया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर भी उसकी विशेषता इस बात में है कि उसमें अनेक समकालीन गायन शैलियों —शास्त्रीय और लोक दोनों में ही जो सर्वश्रेष्ठ है उनके समन्वय की साहसिक कोशिश है। और शास्त्रीय धारा में जीवन्त लोक तत्त्वों के इसी सूक्ष्मयुक्ति पूर्ण सम्मिश्रण की वजह् से उनके गायन में विविधता और आकर्षण आता है। तत्काल ही इसका ताज़गी भरा प्रभाव पड़ता है। उनके गायन में अभिव्यंजनात्मक गुण की वजह से आज के श्रोताओं पर सम्मोहक प्रभाव पड़ता है।

लोक संगीत पर आधारित उनके स्वनिर्मित राग और भक्ति काव्य की सांगीतिक व्याख्या के जरिये प्रकट होनेवाली उनकी कल्पनाशील प्रतिभा भी उतनी ही विस्मयकारी है। और अपने संगीत से अपनी समग्र अन्त: भावितता के साथ वे अपने श्रोताओं तक अपनी प्रतिभा को जिस ढंग से पहुँचाते हैं, वैसा बहुत कम कलाकार ही कर पाते हैं।

अत: प्रत्याशित रूप में उनका संगीत इस प्रकार का है, जिसके संबंध में समकालीन श्रोताओं में विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हों। उनके संगीत ने, उनके जितने आलोचक बनाये हैं, उतने ही उनके समर्थक भी। जबकि कुछ लोग उन्हें विलक्षण प्रतिभाशाली कहते हैं, तो अन्य उन्हें विद्रोही बताते है। वास्तव में वे ये दोनों ही हैं और इसी वजह से कुमार गंधर्व निरन्तर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं।

उनके उत्साही समर्थक दावा करते हैं कि शास्त्रीय गायक के रूप में कुमार गंधर्व की रचनाशीलता परिवर्तनशील समय और जन-रुचि के अनुरूप गंभीर संगीत को नया रूप देने के लिए मिट्टी के संगीत लोक संगीत से प्रेरणा प्राप्त करने का प्रयास करती है। दूसरी ओर, उनके आलोचकों का कहना है कि लोकात्मक अलंकारों से सज्जित करने के रुझान से उनकी राग प्रस्तुति में शास्त्रीय तत्त्व ह्रास की ओर प्रवृत्त होता है। आलोचकों के विचार में कुमार सदैव मध्यलय और द्रुत संरचनाओं पर जोर देते हैं। वे महसूस करते हैं कि कुमार मंद्रसप्तक में प्रभावकारी रूप से गायन नहीं कर सकते, ठा लय (जो कि ख़याल गायन के लिए अनिवार्य है) में नहीं गाते और उनकी मध्यलय में न तो तान रहती है और न बोलतान। उनके मतानुसार, कुमार जब भी इन चीज़ों को आजमाते हैं, वे भोंडी, यहाँ तक कि हास्यास्पद लगती हैं।

फिर ऐसे लोग भी हैं जो उनके स्वनिर्मित रागों के औचित्य और पारम्परिक रागों के आदर्श स्वरूप में भद्दे जोड़ लगाने की उनकी कमज़ोरी पर एतराज़ करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर ये सब बातें कहते समय ये आलोचक इस तथ्य को स्वीकार करने से भी नहीं चूकते कि कुमार में अपने रागों को असाधारण किन्तु विशिष्ट रूप देने की प्रशंसनीय प्रवीणता है।

मैं सन् 1955 से कुमार गंधर्व को उत्सुकतापूर्वक सुनता आ रहा हूँ और पारम्परिक संगीत की नयी दिशाओं की खोज करने के उनके कठिन प्रयासों में मेरी गहरी दिलचस्पी रही है। मैं अनुभव करता हूँ कि उनका संगीत और अभिव्यक्ति की शैली इतने सूक्ष्म रूप से आत्मोन्मुखी है कि अच्छी मनःस्थिति रहने पर उन्हें और उनके श्रोताओं को अनुभूति की महान् ऊँचाइयों तक ले जा सकती है, अथवा दोनों को ही आचाररहित तरीक़े से जड़ता की अतल गहराइयों में डुबा सकती है।

कई बार उनकी झटकेदार तान संरचनाओं को, जिसमें शुरू में पूरे गले की आवाज़ के तेज़ स्वर, बाद में हलके, साधारण से अधिक ऊँचे स्वर और अन्त में लगभग अश्रव्य स्वर होते हैं, बहुतेरी बार सुनकर मैं परेशान हो गया। उनके स्वरचित कुछ रागों की विलम्बित में प्रस्तुति अक्सर एक नियत प्रकार की पुनरावर्तक संरचनाओं में होती है, ख़ासकर के उस समय जबकि उनका विकास धीमा होता है। और ख़ास तौर पर इसलिए कि ये राग लोकधुनों पर आधारित होते हैं, उनका विस्तृत विस्तरण सम्भव नहीं होता। बहरहाल, इन्हीं रागों की द्रुत प्रस्तुतियाँ निश्चय ही जीवन्त और रंजक भी लगती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि धुन उगम रागों का आकर्षण उनकी तीव्र गति के साथ ही उनकी संक्षिप्तता में निहित है। ऐसे रागों के रिकार्ड किये गये रूप मेरे कथन की पुष्टि करते हैं।

इन धुन उगम रागों के संबंध में, मैं इस सम्भावना को नहीं नकारता हूँ कि वे हिन्दुस्तानी संगीत परम्परा में अन्ततः पूरी तरह समाविष्ट हो जायेंगे। फिर भी यह कहना प्रंसगेतर नहीं होगा कि आकार और संरचना की दृष्टि से व्यग्र करने वाली विविधता होने के बावजूद उन के सभी नवाचारों को समय सिद्ध रागों के बराबर नहीं स्वीकार किया जा सकता। उदाहरणार्थ, लगन गंधार जैसे उनके राग में राग-संरचना के स्वीकृत मानदण्डों को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया गया है।

इतना कहते हुए भी मैं मालवती, संजारी और बीहड़ भैरव जैसी अन्य रचनाओं के सदाबहार आकर्षण से इनकार नहीं करता हूँ। सोहिनीभटियार, गौरी बसंत और कामोद नट भी इसी तरह की रचनाएँ हैं। इनमें से प्रत्येक में दो पारम्परिक रागों का विलक्षण सम्मिश्रण किया गया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और स्वयं कुमार गंधर्व अपनी इस दृष्टि की बाबत क्या कहते हैं ? वे ज़ोर देकर कहते हैं कि परम्परा को रचनात्मकता उत्तेजित करना चाहिए और प्रगति के मार्ग में रोड़े का कार्य नहीं करना चाहिए। उनकी राय में अनुसंधान और प्रयोग करने की प्रवृत्ति की बेहद कमी है और इस वजह से संगीत के जड़ हो जाने का ख़तरा है। इसी वजह से कुमार पारम्परिक संगीत में नयी दिशाओं के संधान में लगातार लगे हुए हैं।

इस संधान की पृष्ठभूमि में उस विलक्षण प्रतिभाशाली शिशु की महान् गाथा है जिसकी नियति एक विद्रोही विभूति के रूप में उभर आने की थी। कुमार गंधर्व (जिनका वास्तविक नाम शिवपुत्र सिद्ध रामय्या कोमकाली है) का जन्म कर्नाटक के बेलगाम में 1924 में हुआ था।

उनमें अपने समय के लगभग प्रत्येक बड़े गायक, जैसे—अब्दुल करीम ख़ाँ, अल्लादिया ख़ाँ और फ़ैयाज़ ख़ाँ से लेकर रामकृष्ण बुवा वझे, केसरबाई केरकर और सवाई गंधर्व की गायन शैली का अनुकरण करने की आश्चर्यकारी आन्तरिक प्रेरणा थी। यह जरूर है कि उन्होंने यह रुझान अपने गायक पिता से उत्तराधिकार में प्राप्त किया था परन्तु उन्हें 11 वर्ष की उम्र में ही ख्याति मिल गयी, जब उन्होंने 1935 में इलाहाबाद में आकाशवाणी संगीत सम्मेलन में अपना पहला सार्वजनिक प्रदर्शन प्रस्तुत किया था।

बंबई के प्रख्यात संगीतकार और संगीतज्ञ प्रोफेसर बी. आर. देवधर ने किशोर वय कुमार को लगभग एक दशक से अधिक समय के लिए व्यवस्थित रूप से शिक्षा देने के लिए अपने अधीन ले लिया। उन्होंने अपने इस उत्कृष्ट शिष्य को संगीत कला के प्रति सर्वग्राही दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता दी। उनका उद्देश्य इस शिष्य को विभिन्न समकालीन घरानों और उनके विभिन्न महान् कलाकारों के, जिनकी संस्कार अर्जित करने के प्रारम्भिक दिनों में कुमार ने देववत उपासना की थी, गुणों और कमियों को अच्छी तरह समझा देना था। कुमार ने इन महान् कलाकारों को संगीत सभाओं में भी कई वर्षों तक सुना था। संगीत से इस साक्षात्कार का उनके मन पर नियामक प्रभाव पड़ा। कुमार ने विभिन्न गायकी के श्रेष्ठ तत्त्वों को चुनना शुरू कर दिया। इन तत्त्वों का उन्होंने अपनी प्रतिभा और विभूति के अनुरूप अपने गायन की शैली विकसित करने के लिए विलक्षण रूप से सम्मिश्रण किया।

इसी बीच यक्ष्मा से गंभीर रूप से पीड़ित होने की वजह से प्रोफेसर देवधर से कुमार की शिक्षा प्राप्ति में व्यवधान आया और लम्बे समय तक आराम करने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और स्वास्थ्य लाभ करने के लिए उन्हें देवास आना पड़ा। उन्हें पाँच वर्ष तक बिस्तर से जकड़े रहना पड़ा। इस दौरान डाक्टरों ने उनको अपना तानपुरा छूने तक से मना कर दिया था। फिर भी जब उनका अपने क्षेत्र के लोकसंगीत की विस्तृत और वैविध्यपूर्ण सम्पदा से साक्षात्कार हुआ तो उनके सक्रिय मन और अदम्य चित्त स्फूर्ति ने बीमारी पर विजय प्राप्त कर ली। उन्होंने पाया कि लोक-संगीत ने उनके जीवन की कमी को पूरा कर दिया है। इस नये क्षेत्र में उनकी अन्तर्भावितता इतनी तेज और समग्र थी कि उससे उनकी रचनात्मकता को एक नया आयाम मिल गया। और जैसे ही उनकी तबीयत सुधरनी शुरू हुई, कुमार के संगीत में भी उस अद्वितीय रूपांतर की प्रक्रिया शुरू हो गयी, जिसे कि पारम्परिक संगीत में नयी दिशा निर्धारित करनी थी। उन्होंने अपने क्षेत्र के लोक संगीत की सादगी, रूप और विषय का अध्ययन तथा विश्लेषण किया, 300 से अधिक लोक-गीतों का संग्रह किया, उनकी स्वरलिपि तैयार की और इस तरह धुनों को लगा-तार गुनगुनाते रहे। इसके फलस्वरूप विविध धुन उगम राग, जो अब प्रसिद्ध हैं, निर्मित हुए। ये राग कुमार के महान् ग्रंथ **अनूप राग विलास** में संकलित हैं।

कुमार के सौन्दर्यशास्त्र का एक आधारभूत सिद्धांत हैं कि राग निर्मित नहीं किये जाते हैं, वे तो अस्तित्व में रहते हैं और अपने खोजे जाने की प्रतीक्षा करते रहते हैं। उनका मत यह है कि इन रागों को पाने के लिए कलाकार के लिए अनिवार्य है कि वह उन्हें उसी जगह ढूँढ़े जहाँ अपने शास्त्रीय संगीत के यशस्वी किन्तु अज्ञात निर्माताओं ने खोजा था—अपने लोकसंगीत की अपरिमित गहराइयों में। इस लक्ष्य को पाने की कोशिश के दौरान कुमार ने एक नये संसार, लोकसंगीत में बद्धमूल शास्त्रीय शब्दोच्चार के संसार, की ध्वनि बाधाओं को पार करने का साहस किया है। यह तथ्य गीत वर्षा, गीत वसंत और गीत हेमंत में उज्ज्वल रूप में प्रतिबिम्बित हुआ है।

कुमार गंधर्व एक कवि की भावुकतावाले संगीतकार हैं। कोई भी प्राकृतिक घटना—चाहे वह मनोरम सूर्योदय हो, पूनम की रात हो या हमारे दैनिक जीवन की ही कोई घटना या आकस्मिक प्रसंग हो, उन्हें ऐसा गीत लिखने के लिए प्रेरणा दे सकता हैं कि जिसमें स्वर और शब्द स्वाभाविक रूप से एक हों और उनके मन में उभरे। वे ऐसे ही गीत, या जिसे वे सही ही बन्दिश कहते हैं, को प्रमुखता देते हैं। वे कहते हैं कि बन्दिश में प्रत्येक अक्षर का महत्त्व है क्योंकि सिर्फ़ उसके शब्दों के माध्यम से राग के भाव और चरित्र को प्रभावकारी रूप से अर्जित किया जा सकता है और श्रोताओं तक संज्ञापित किया जा सकता है। यह उनकी काव्यात्मकता की सहज प्रवृत्ति है जिसने उन्हें कबीर, मीरा, सूरदास और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुकाराम की भक्ति कविता की व्याख्या—कुमार की अचूक रहस्यवादी शैली में करने को प्रेरित किया।

बहरहाल, महाराष्ट्र में बाल गन्धर्व के रंग संगीत की उनके द्वारा प्रस्तुतियों के संबंध में भी गम्भीर रूप से मत वैभिन्नय है, यद्यपि इसमें भी उनकी मौलिक शैली उजागर होती है।

उन्हें लेकर काफ़ी विवाद है, फिर भी वे शान्त और निश्चिन्त बने रहते हैं। वे अपनी विनम्रता और संगीत की अपनी देवी के प्रति अपनी निष्ठा की वजह से अपने साथियों के जितने प्रिय हैं उतने ही प्रिय श्रोताओं के हैं। उनमें शिशु सुलभ सरलता और आकर्षण है। वैसे ही शिशु-सरीखा उनका भरा-भरा चेहरा है, ख़ासकर के तब जब वे मुस्कुराहट के साथ आपका स्वागत करते हैं। देवास में उनका घर एक सुन्दर बाग़ीचे में स्थित है। यह पहाड़ी के नीचे और भयंकर भीड़ से दूर है। मध्यप्रदेश की संगीत परम्परा उनकी बहुमुखी रचनात्मक प्रतिभा द्वारा सच्चे रूप में निरंतर समृद्ध और चिरस्थायी हो रही है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब्दुल हलीम जाफ़र ख़ाँ : परम्परा और नवाचार का संगम

□ □

निश्चय ही सितार उत्तर भारत के संगीत सम्मेलनों में आज सर्वाधिक लोकप्रिय वाद्य है। अभिव्यंजकता और कौशल प्रदर्शन की दृष्टि से यह अनन्य वाद्य है। एक सच्चे कला प्रवीण के हाथ में पहुँचकर सितार सूक्ष्म, सुकुमार सांगीतिक छवि से लेकर ओजस्वी सशक्त स्वर तक—अनुनाद के सिर्फ़ कम्पन से लेकर सशक्त स्वरानुक्रम के सैलाब तक को प्रस्तुत कर सकता है।

और कौशल प्रदर्शन की इसी क्षमता, सांगीतिक अभिव्यक्ति के अनन्त विस्तार की इसी सम्भावना ने सितार को आज का न सिर्फ़ सर्वाधिक लोकप्रिय वरन सर्वाधिक विवादास्पद वाद्य भी बना दिया है। वास्तव में हाल के वर्षों में सितार वादन को जितने रूपों में शैलीबद्ध और आशुकलाबद्ध किया गया है उससे ऐसे संगीत की निर्मिति हुई है जो न सिर्फ़ कर्णप्रिय है वरन मन को भी चौंकानेवाला है।

यह कहते समय, मेरी स्मृति में छठे दशक के अंतिम चरण में बंबई में आयोजित एक जीवन्त संगीत सम्मेलन की याद उभर आती है, जिससे मैंने एक सर्वाधिक लोकप्रिय और नवाचारी सितार कला प्रवीण अब्दुल हलीम जाफ़र खाँ को पहली बार सुना था। युवा, शिष्ट हलीम जाफ़र ने सौन्दर्य के प्रति संवेदनशील कलाकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के रूप में मुझे आकर्षित किया था। उनकी व्यावहारिक निपुणता और तकनीकी दक्षता भी समान रूप से प्रभावशाली थी। उनका वादन परिष्कृत, सुश्राव्य और परिशुद्ध था। उनकी स्वर संरचनाएँ गतिमान, उनकी मीड़ें प्रभावकारी और तानें दीप्तिमान थीं। उनकी लय संकल्पना भी कम विलक्षण नहीं थी। इसके अतिरिक्त उनमें प्रभाववाद का रुझान भी था।

परन्तु मैंने उनके वादन में स्पष्ट रूप से बेचैनी का तत्त्व भी महसूस किया, खासकर के उस समय जबकि उनकी द्रुतगामी उंगलियाँ ऊपर से लेकर नीचे तक पूरे वाद्य पर तेज़ी से लहराती थीं। इसका प्रभाव जीवन्त और आकर्षक दोनों ही था, किन्तु बस क्षणिक। उस आशुकलात्मकता में भरपूर अलंकृत मुहावरों और आकर्षक सुर-क्रमों के बावजूद कोई बिम्ब स्पष्ट रूप से उभर कर नहीं आ सका। अलग-अलग रूप में ये सब अतिसुन्दर थे जो उनकी विविधता के विस्तार को प्रकट करते थे। पर मैंने अनुभव किया कि ये सब तत्त्व मिलकर किसी सुगठित स्निग्ध सांगीतिक चित्र को मुश्किल से ही उभार पाते थे। और ऐसा लगता था, माना हलीम जाफ़र किसी ऐसे उत्तेजित प्रयोग में लगे हुए हों जिसमें वे कुछ ऐसा नया उपलब्ध करना चाहते हैं जिसकी जड़ें इसी मिट्टी में हों।

इस प्रयोगशीलता ने अब अपना सम्पूर्ण स्वरूप प्राप्त कर लिया है और वह अब जाफ़र खानी बाज के रूप में जानी जाती है। हलीम जाफ़र का आग्रह है कि "यह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो सिर्फ अंगुलियों के तकनीक से निर्मित हो, किन्तु सितार वादन की दो पारम्परिक शैलियों—विलम्बित लयवाली मसीत खानी और द्रुत लयवाली रजाख़ानी के बीच संतुलन प्राप्त करने की ईमानदार कोशिश है।"

अपने नवाचार की विशेषताएँ बतलाते हुए हलीम जाफ़र ने एक बार मुझसे कहा था कि वे इसे मसीत खानी **मिजराब बोल** का उत्तराधिकारी मानते हैं, जिसकी वजह से स्वरों और स्वरालापों की पुनः उत्पत्ति की क्षमता को बायें हाथ के तार के काम में पक्के तौर पर रूपांतरित किया जा सका है। इस प्रक्रिया में एक एकाकी बीन ने उन्हें तीन से आठ आंशिक स्वरोंवाले प्रभाव को निर्मित करने में सहायता दी।

इसी नवाचार के फलस्वरूप उस्ताद सगर्व दावा करते हैं कि वे मींड, उल्टी मींड, मुरकी, खटका और हिक्का का तत्क्षण संलयन करने का कौशल दिखला सकते हैं। उनके मतानुसार स्वरों की बुनावट की दृष्टि से यह उपलब्धि मसीत खानी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शैली से आगे की चीज़ है। संक्षेप में, संवादी स्वरों का एक नया तकनीक है जो दो तारों को एक साथ बजाने से उपलब्ध होता है। हर मानदण्ड से, यह तकनीक एक नयी चलन बनानेवाला बाज बन चुका है। अन्य गुणों के अलावा इसमें, उस्तादजी के शब्दों में, झरभरन और उचट लड़ी के विशेष गुण हैं।

हलीम जाफ़र की नवाचारी विदग्धता सितार पंचक जैसे बहुस्वरी प्रयोगों और चक्रधुन, माध्यमी, कल्पना, खुसरोवाणी और कई अन्य स्वनिर्मित रागों के माध्यम से उजागार हुई है। उन्होंने वसंतमुखरी, चम्पाकली, राजेश्वरी, श्याम केदार और रूपमंजरी मल्हार जैसे रागों को फिर से प्रकाश में लाने के लिए बहुत प्रयास किया है। किरवानी, लतांगी, हेमवती, सम्मुखप्रिया और चलनटी जैसे कर्नाटकी रागों के हिन्दुस्तानी पर्यायों को लोकप्रिय बनाने का श्रेय अब्दुल क़रीम ख़ाँ, रविशंकर और अली अकबर जैसे उस्तादों के साथ-साथ हलीम जाफ़र को भी है।

कई लोगों को यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि अब्दुल हलीम जाफ़र ख़ाँ ने अपने सांगीतिक जीवन की शुरूआत ग़ज़ल गायन से की थी। उनका जन्म जावरा में 1929 को हुआ था। उन्हें मीठी आवाज़ का वरदान मिला हुआ था और बाल्यावस्था में ही वे अपनी ग़ज़लों से प्रशंसक श्रोताओं को मुग्ध कर लेते थे। उन्हें आकाशवाणी से अपने गीत प्रसारित करने का स्पृहणीय अवसर सिर्फ 9 वर्ष की अवस्था में ही मिल गया था।

इस बीच उनके पिता जाफ़र ख़ाँ ने उन्हें कण्ठसंगीत के साथ-साथ सितार-वादन भी सिखलाना शुरू कर दिया। किन्तु हलीम जाफ़र ने जब प्रख्यात वरिष्ठ संगीतकार बाबू ख़ाँ को सुना तब सितार के संगीत के प्रति उनका तीव्र आकर्षण जाग्रत हुआ। हलीम जाफ़र ने बाबू ख़ाँ से संगीत शिक्षा ली। दो साल बाद, बाबू ख़ाँ का देहावसान होने के साथ, हलीम ने एक अन्य वरिष्ठ संगीतकार मेहबूब ख़ाँ का, जो प्रख्यात संगीतज्ञ बन्दे अली ख़ाँ के शिष्य थे, शिष्यत्व ग्रहण किया।

प्रबुद्ध और अध्ययनशील हलीम जाफ़र अपनी अकादेमिक शिक्षा के प्रति भी उतने ही सचेत थे। उन्होंने हाई स्कूल की परीक्षा पास कर ली परन्तु पारिवारिक परिस्थितियों के कारण वे महाविद्यालयीन शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रहे। अतः उन्हें सितार-वादन पर ही पूरा ध्यान केन्द्रित करना पड़ा। इस बीच उन्होंने जलतरंग वादन में भी निपुणता प्राप्त कर ली थी। इसके फलस्वरूप उन्हें एशियाटिक पिक्चर्स की वाद्य वृंद इकाई में रोज़गार मिल गया। फ़िल्म जगत् की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सम्बद्धता की वजहसे उन्हें **महात्मा विदुर, अनारकली, शबाब, झनक झनक पायल बाजे, गूंज उठी शहनाई** और अन्य कई फ़िल्मों में इन दोनों वाद्य यंत्रों पर अपनी प्रवीणता प्रदर्शित करने के बहुतेरे अवसर प्राप्त हुए ।

किन्तु फ़िल्म जगत् से उनका संबंध ज़्यादा दिनों तक नहीं रहा और परम्परावादी हलीम जाफ़र ने अपने आपको पूरी तरह से अपने सितार के लिए समर्पित करने का निर्णय लिया । उनका कहना है कि चौदह वर्ष की उम्र से ही सितार उनकी अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम रहा है ।

उस्ताद हिन्दू संस्कृति की परम्पराओं से उतने ही अच्छी तरह से परिचित हैं, जितने कि वे भारतीय संगीत के इतिहास से भिज्ञ हैं । बातचीत में कुशल हलीम जाफ़र अपने निर्भीक दृष्टिकोण और विचारों से आपको हतप्रभ कर देंगे, जैसे कि वे कहते हैं, अमीर खुसरो सितार के आविष्कारक थे । उनके इस मत पर भी गहरा विवाद हो सकता है कि वीणा का आविष्कार ऋग्वेद काल में नहीं हुआ था । उन्होंने अमीर खुसरों के जीवन और कृतित्व पर काफी शोध किया है और इस विषय में कई लेख प्रकाशित किये हैं । वे विजिटिंग प्रोफेसर, परीक्षक और प्रश्नपत्र निर्धारक के रूप में कई विश्वविद्यालयों से भी सम्बद्ध रहे हैं । जिस व्यक्ति ने हाई स्कूल से ज़्यादा औपचारिक शिक्षा न पायी हो उसके लिए यह वास्तव में एक उपलब्धि है । उन्होंने राष्ट्रीय स्तर की कई संगोष्ठियों और परिचर्चाओं और विदेशी को जानेवाले सांस्कृतिक प्रतिनिधि मण्डल में भी उल्लेखनीय रूप से भाग लिया है ।

अब्दुल हलीम जाफ़र ख़ाँ ने आज के महान सितारवादकों की पंक्ति में अपना स्थान प्राप्त करने के लिए लम्बा रास्ता अब पूरा कर लिया है । उन्हें पद्मश्री और हिन्दुस्तानी संगीत के लिए संगीत नाटक अकादेमी का पुरस्कार प्राप्त हो चुका है । उन्होंने 1979 में हलीम अकादेमी ऑव् सितार की स्थापना की थी । यह अकादेमी सच्ची गुरुकुल परम्परा में ज्ञान और विपुलता को शिष्यों को उपलब्ध कराने की उनकी आकांक्षा की परिपूर्ति का प्रतीक बन गयी है । जब वे अपने नये संस्थान की चर्चा करते हैं तो वर्षों पहले उनके पिता और गुरु ने उन्हें जो सलाह दी थी, उसे वे उद्धृत करते हैं, "बेटे, तुम्हारी आँखें अभी भी तारों और नक्काशी पर चक्कर काट रही हैं, आँखें उँगलियों के टिकुलियों पर ही जरूरी तौर पर जमनी चाहिए," और फिर भावना से कम्पित आवाज़ में हलीम जाफ़र कहते हैं, "मैं इन शब्दों का मतलब तो समझ सका था, परन्तु उसकी महत्ता को समझने में मुझे पूरा जीवन लगाना पड़ा ।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अमजद अली ख़ाँ : अग्रगामी सरोदिया

□□

अमजद अली ख़ाँ का नाम लेते ही मन की आँखों के सामने एक युवा, गौर वर्ण, बेहद खूबसूरत आदमी की तस्वीर उभर आती है। मझोली काठीवाले अमजद की केश सज्जा जेट सेट फैशन की है। वे अक़सर ही शानदार वेशभूषा में रहते हैं और कभी-कभी ऐसा चश्मा लगाते हैं कि जिससे उनकी चपल मुखाकृति पर नयी चमक आ जाती है।

यदि अमजद अली के व्यक्तित्व को वर्णित करने के लिए भव्य शब्द का प्रयोग हो सकता है तो सरोद कला प्रवीण के रूप में उनकी उपलब्धियाँ भी कुछ कम भव्य (असाधारण) नहीं हैं। उनके प्रख्यात पिता हाफ़िज अली ख़ाँ ने उन्हें पाँच वर्ष की आयु से ही सरोद के रहस्यों से परिचित कराना शुरू कर दिया था, दस वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच से पहला प्रदर्शन दिया और पन्द्रह वर्ष की वयस में उन्हें यशस्वी कलाकार के रूप में सम्मानित किया जाने लगा। आज, छत्तीस वर्ष की आयु में वे हमारे समय के सर्वाधिक लोकप्रिय वाद्य वादकों में से एक हैं और सर्वाधिक विवादास्पद भी। एक संवेदनशील रसिक का कहना है, "संगीत के प्रति अमजद अली की दृष्टि पारम्परिक में सर्वाधिक परम्परानिष्ठ और रचनात्मक में सर्वाधिक प्रगतिशील है"।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(वास्तव में अन्य किसी कला की भाँति) संगीत दो प्रकार का होता है। पहले प्रकार के संगीत की विशेषता सिर्फ़ भौतिक क्षमता और बौद्धिक निपुणता है, जिसकी सहायता से वादक स्वर और लय की संरचनाएँ निर्मित कर प्रभावपूर्ण रागात्मक तैयारी को प्रकट करता है। जबकि दूसरे प्रकार में अन्त:प्रज्ञा का विषयीपरक तत्त्व, प्रेरणा देनेवाली मानववादी अन्तर्निहित शक्ति (जो समस्त महान् रचनाओं को प्रेरित करती है) नियामक होती है, इतना ही नहीं, यह शक्ति ही सांगीतिक प्रयास को स्पन्दनशील बनाती है और मेरे मतानुसार अमजद अली एक ऐसे कलाकार हैं, जो यह चुनते हैं कि इन दोनों प्रकार में से कौन-सा संगीत प्रस्तुत किया जाये। उनका चयन इस बात पर निर्भर करता है उनके समक्ष उपस्थित श्रोतावर्ग किस प्रकार का है।

मैंने उन्हें पहली बार 1961 में सुना था जब वे अपने यशस्वी पिता के साथ थे। उसी समय से मैं उन्हें लगातार उत्सुकतापूर्वक सुनता आ रहा हूँ। इन बीस वर्षों में उन्हें बारम्बार सुनने के बाद, मैं यह पाता हूँ कि वे अपनी संगीतकारिता के लगातार किन्तु सुनिश्चित परिवर्तन की प्रक्रिया में हैं। उनके द्वारा हाल ही में दिये गये प्रदर्शन उन्हें एक कुशल तकनीशियन के रूप में ज़्यादा और रचनात्मक कलाकार के रूप में कम सामने लाते हैं।

यह कहने का अर्थ, इस बात से इनकार करना नहीं है कि अमजद अली का अपने सरोद से लगभग इन्द्रजालिक तादात्म्य है। वास्तव में इतने कठिन वाद्य का इतना कला प्रवीण प्रयोग बिरले अवसर पर देखने को मिलता है। अमजद अली अपने वाद्य को सुदीर्घ सिद्ध आलाप, सुकुमार मींड, उत्तेजक तीनताल के झाले और फिर सशक्त स्वरों को उभारने के लिए हौले से प्रयोग में ला सकते हैं। यह अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सरोद अमजद अली के विचारों और अन्त:प्रज्ञा के समक्ष अपने को पूरी तरह से खुद-ब-खुद समर्पित कर देता है। यह कहना भी उतना ही सत्य होगा कि उन्होंने एक ऐसी शैली विकसित की है जो खुद निर्दिष्ट कर सकती है कि ज़ोर किस बात पर दिया जाये।

पर जैसा कि मैंने पहले कहा है, हाल ही में अमजद ने जो वादन प्रस्तुत किये हैं वे कुछ ऐसी नयी प्रवृत्तियाँ प्रतिबिम्बित करते हैं, जिन्हें मैं बाधक, क्षोभकारी भी समझता हूँ। इनमें से पहली प्रवृत्ति है, रागों की अति विस्तृत बोझिल प्रस्तुति के प्रति उनका मोह। इस बात पर आश्चर्य होता है कि क्या राग के भाव-बोध की निर्मिति और राग प्रस्तुति की अवधि के बीच कोई आवश्यक संबंध है। अक्सर ही, सुदीर्घ राग विस्तार में अनावश्यक दुहराव लगने लगता है और उससे भी बुरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थिति यह होती है कि इसके फलस्वरूप श्रवण-रुचि में उल्लेखनीय कमी आती है।

अमजद अली की एक और प्रवृत्ति है। वे अपने वादन के अन्तिम चरणों में गति प्रदर्शित करते हैं, जो निरपवाद रूप से अनियंत्रित ध्वनि में अपजनित हो जाती है। उनकी सबसे अंतिम फिर भी महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति यह है कि वे अपने प्रदर्शन में ज्यादातर उन्हीं रागों को प्रस्तुत करते हैं जो उनकी पसन्द के और उन्हीं के द्वारा निर्मित हैं। उनके ऐसे स्वनिर्मित राग हैं श्याम श्री, हरिप्रिया, सुहाग भैरवी, मन्द समीर, किरण रंजनी, विभावरी और चन्द्र ध्वनि। उनके द्वारा निर्मित इन रागों से किसी का कोई बैर सिर्फ़ इसलिए नहीं है कि वे नये हैं, इनमें से कई राग जीवन्त और सुकृत भी हैं। पर इन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए युगों से चले आ रहे किन्तु निरन्तर आकर्षक रागों को नहीं छोड़ना चाहिए। मेरे मन में अमजद द्वारा इन पुराने रागों की प्रस्तुति की नास्टैलजिक याद बनी हुई है। इन रागों की प्रस्तुति में अमजद ने सदैव ही कमाल दिखाया था। फिर उन्होंने इन रागों को बजाना क्यों छोड़ दिया है ?

अमजद अली के सरोद वादन की शैली में जो परिवर्तन आ रहा है, उसका कारण वह श्रोतृवर्ग है जिसके समक्ष वे अधिकांश बार वादन प्रस्तुत करते हैं। जैसा कि अच्छी तरह मालूम है, उनका श्रोतृवर्ग उन युवाओं का होता है जो जीन पहनते हैं, लम्बे बिखरे बाल रखते हैं और नव धनाढ्य वर्ग के संस्कृति-लोभी लोग हैं। इससे ज्यादा क्लेश की बात यह है कि इस प्रकार के श्रोताओं का संरक्षण कलाकारों को अपने प्रदर्शन का पारिश्रमिक इस सीमा तक बढ़ा देने के लिए प्रोत्साहित करता है कि मध्यम और निम्न वर्ग के संगीत प्रेमी (जो कि सच्चे रसिक हैं) इन कलाकारों का संगीत सुनने का सुखोपभोग नहीं कर सकते। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमजद अली जैसे शीर्ष स्थानीय कलाकारों की संगीत सभाएँ अब बंबई तथा कई अन्य बड़े-छोटे शहरों के संगीत मण्डलों (म्यूजिक सर्किल) द्वारा आयोजित नहीं की जाती हैं।

अमजद अली के कैरियर में सन् 1973 में संगीत सम्मेलनों के आयोजक के रूप में उनका उभर कर आना एक महत्त्वपूर्ण घटना है। सन् 1962 में अपने पिता की मृत्यु के तुरन्त बाद उन्होंने 'द इण्डियन म्यूजिक सोसायटी' की स्थापना की थी, जो महान् सरोद वादक हाफ़िज अली ख़ाँ की बरसी (पुण्य तिथि) पर वार्षिक सम्मेलन आयोजित करती है। सन् 1975 और 1976 में यह सम्मेलन बंबई में आयोजित हुआ था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आयोजक-प्रदर्शक की नयी भूमिका के संबंध में मेरे एक सवाल का उत्तर देते हुए अमजद अली ने मुझसे कहा था कि भारतीय परम्परा में बरसी का सिलसिला बहुत पुराना है और कि मेरे पिता की इच्छा थी कि मैं बरसी का आयोजन करूँ। अमजद अली ने इस बात के साथ ही तुरन्त यह स्पष्ट किया कि पुराने जमाने की बरसी और उनके द्वारा शुरू किये गये पुण्य-स्मृतिसम्मेलन में क्या अन्तर है। "पुराने समय में कलाकारगण सांगीतिक श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आते थे और किसी पारिश्रमिक की अपेक्षा नहीं करते थे। परन्तु इस सम्मेलन में भाग लेनेवाले कलाकार प्रख्यात होते हैं और उनकी सेवाओं की अधिस्वीकृति में उनका सामान्य पारिश्रमिक उन्हें भेंट किया जाता है। स्वाभाविक है कि सम्मेलन के कार्यक्रम के लिए टिकट लगाये जायें। पर यह सम्मेलन न हानि न लाभ के आधार पर आयोजित किया जाता है।"

बाद में सूचना मिली कि अमजद अली खाँ ने कलकत्ते में चालीस दिवसीय 'बरसी' का आयोजन किया था। मेरा अनुमान है कि उनकी इण्डियन सोसायटी के तत्वाधान में उत्तर भारत में ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन नियमित रूप से किया जाने लगा है। इस तरह प्रदर्शन के समान ही आयोजन के क्षेत्र में भी उन्हें पूरी सफलता मिली है।

अमजद अली खाँ ने नयी दिल्ली के एक पब्लिक स्कूल में शिक्षा प्राप्त की है। वे खुश मिजाज और मिलनसार हैं तथा अपनी मधुर मुस्कान से अपने मिलनेवाले को अपना बना लेते हैं। वे संगीत के अलावा, ढेर से दूसरे विषयों पर बात करना पसन्द करते हैं और आपको लम्बे समय तक रोचक बातचीत में लगाये रख सकते हैं। वे असुविधाजनक लगनेवाले सवालों को खास तरीके की हाज़िरजवाबी से टाल जाते हैं।

मैंने एक बार उनसे पूछा, "प्रेस में छपनेवाली समीक्षाओं के संबंध में आपकी प्रतिक्रिया किस प्रकार की होती है?" तुरंत जबाव मिला, "आमतौर पर मैं किसी समीक्षा पर कोई प्रतिक्रिया नहीं करता। इसके बावजूद कि कई समीक्षकों के विचारों से मेरा मत भिन्न रहता है, फिर भी किसी के खिलाफ़ शिकायत करने का मेरे पास कोई कारण नहीं है। मैं अपने समीक्षक मित्रों को सलाह देना चाहूँगा कि उन्हें कलाकारों के संबंध में पूर्वग्रह नहीं रखना चाहिए।"

पर विदेश में भारतीय संगीत को लोकप्रिय बनाने के सवाल पर उनका मत बिलकुल स्पष्ट और खरा है। वे कहते हैं, "अनुभव यह बताता है कि अपने कुछ प्रमुख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कलाकारों ने विदेशों में शास्त्रीय संगीत की जो संस्थाएँ स्थापित की हैं, उनसे एक भी क्षमतावान संगीतकार तैयार होकर नहीं निकला है। कम-से-कम भारत में तो किसी ने ऐसे किसी संगीतकार की बाबत नहीं सुना है।"

चाहे जो कहा जाये, युवावर्ग में शास्त्रीय संगीत के प्रति रुचि जाग्रत करने के संबंध में अमजद अली ने उल्लेखनीय योग दिया है। उन्होंने इस उम्र में ही राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त कर ली है और भारत तथा विदेश में अपना एक स्थायी श्रोतृवर्ग तैयार कर लिया है। संगीत के संबंध में उनकी दृष्टि के विषय में गहरे मतभेद हो सकते हैं परन्तु अपने पिता की परम्परा में उनकी जड़ें अब तक दृढ़ता से जमी रही हैं और यह उम्मीद है कि वे इसी तरह आगे जमी रहेंगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बुद्धादित्य मुखर्जी : सम्भावनाशील कला प्रवीण

□ □

आज़ादी मिलने के बाद भारतीय सांस्कृतिक गतिविधियों की एक उल्लेखनीय विशेषता, वह प्रोत्साहन है जो यहाँ की शास्त्रीय कलाओं, विशेषकर संगीत, के समाजीकरण की प्रक्रिया को तेज़ करने को मिला है। हम पाते हैं कि अनेक शिक्षित युवा लोग संगीत को आनन्ददायक वृत्ति की बजाय एक गंभीर जीवन कार्य के रूप में अपनाते जा रहे हैं, इन शिक्षित लोगों की अकादेमिक उपलब्धियाँ इस प्रकार की हैं कि जिनसे उन्हें इंजीनियरिंग जैसे व्यवसायों में या शिक्षा और अनुसन्धान के क्षेत्र में सफलता मिली होती।

छब्बीस वर्षीय बुद्धादित्य मुखर्जी ऐसे ही एक उद्यमी युवा हैं। इन्होंने रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर से सन् 1977 में धातुकर्म विज्ञान में विशेज्ञता के साथ बैचलर ऑव् इंजीनियरिंग की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी और प्रावीण्य सूची में प्रथम स्थान प्राप्त किया था। मुखर्जी ने इस सफलता के बाद अपने लाभ-जनक कैरियर को पारम्परिक संगीत के लिए त्यागने का निर्णय लिया है।

और वे संगीत के लिए भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं। संगीत उनकी शिराओं में है, लय और स्वर उनके रक्त में हैं क्योंकि उनके परिवार में यह गुण पिछली तीन पीढ़ियों से है। उनके पिता विमलेन्दु मुखर्जी, जो आजकल भिलाई स्टील प्लांट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में जनरल मैनेजर हैं, उस परिवार के हैं जिसमें नौकरी करना मुख्य व्यवसाय रहा है, परन्तु जिसका प्रत्येक सदस्य नौकरी के साथ-साथ शास्त्रीय संगीत का अनुशीलन सम्पूर्ण समर्पण की भावना के साथ करता रहा है। विमलेन्दु ने, जो स्वयं एक उल्लेखनीय सितारिये हैं, सितार के अलावा अन्य कई तंतुवाद्यों के वादन की शिक्षा बंगाल के कई शीर्षस्थानीय कलाकारों से प्राप्त की है।

यद्यपि विमलेन्दु ने संगीत को व्यवसाय के रूप में नहीं लिया है फिर भी उन्होंने अपने खाली समय को संगीत शिक्षा देने और समय-समय पर सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करने में लगाया है। इस तरह, बुद्धादित्य का घर हिन्दुस्तानी और कर्नाटकी संगीत परम्पराओं के वरिष्ठ कलाकारों और उत्तर भारत के श्रेष्ठ नृत्यकारों का मिलन स्थल रहा है। यह कहना ज़रूरी नहीं है कि इस सांगीतिक पर्यावरण ने इस विलक्षण प्रतिभावाले और समय पूर्व प्रौढ़ हुए बालक के भविष्य को गढ़ने में निर्णायक भूमिका निबाही।

बुद्धादित्य ने पाँच वर्ष की उम्र से अपने पिता के निर्देशन में सितार बजाना शुरू किया और सन् 1976 में कलकत्ते में अपना पहला कार्यक्रम प्रस्तुत किया। इस प्रदर्शन में ही उन्होंने अभावुक रसिकों और औसत संगीत-प्रेमियों को पूरी तरह अभिभूत कर दिया। इसके बाद तो वे आगे बढ़ते ही चले गये। वे पूरे भारत में और यूगोस्लाविया, बलगारिया, पोलैण्ड, रूस और संयुक्त अरब अमीरात जैसे देशों में विशाल श्रोतावर्ग के समक्ष सितार वादन करते रहे हैं। भारत के महानगरों, राज्यों की राजधानियों या दूरस्थ नगरों, अथवा विदेश में ज़गरब, सोफिया, वारसा, मास्को या दुबई जैसे स्थानों में जहाँ कहीं भी उन्होंने सितार बजाया, अपने वादन में निजी प्रतिभा, मौलिकता और कला मर्मज्ञता और शुद्ध शास्त्रीयता के प्रति ललक को उजागर किया।

नवम्बर 1976 में बुद्धादित्य ने बंबई में अपना पहला कार्यक्रम आकाशवाणी संगीत सम्मेलन की एक प्रातःकालीन संगीत सभा में आमंत्रित श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत किया। छोटे कद के, दुबले-पतले, शर्मीले और सरल बुद्धादित्य में जेट-युग की चकाचौंध करनेवाली मुद्रा, जिसका परिचय हमें उनके अनेक साथियों से मिला है, नहीं थी। मुझे बुद्धादित्य ऐसे लगे, मानो वे कोई नये साधु हैं जो संन्यास की औपचारिक दीक्षा की प्रतीक्षा कर रहे हों।

प्रथम प्रदर्शन प्रस्तुत करनेवाले बीस वर्षीय कलाकार का सितार वादन अविश्वसनीय लगा था। उनके वादन में संगीत के प्रति सचेत वैविध्यपूर्ण दृष्टि,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सौंदर्यशास्त्रीय चेतना और कलात्मक एकान्विति थी। लेकिन मुझे इन बातों से परे, उनके मानस दर्शन की शक्ति ने ज़्यादा प्रभावित किया। मानस दर्शन वह तत्त्व है जो अद्वितीय किन्तु प्राणमूलक है और जिसके बिना कोई भी संगीत श्रवण आनन्द नहीं दे सकता। वे अपने सितार को किसी हलकेपन या दिखावे से नहीं बल्कि कोमलता के साथ और सहेजने के भाव से लिये हुए थे। इससे मेरे मन में धारणा बनी कि उनमें एक सच्चे भक्त की एकाग्रता भी थी। उसके बाद से बम्बई में वे अनेक बार सितार बजा चुके हैं और मैंने उन्हें जितनी ही बार सुना उतने ही बार उन्होंने मुझे अपने वादन में साम्य और संतुलन, स्वर और लय के अंलकारों और चुने हुए रागों के त्रुटिहीन चित्रण द्वारा अभिभूत कर दिया।

अनेक बार लोग बुद्धादित्य के सितार-वादन में विलायत ख़ाँ का गहरा प्रभाव देखते हैं। इस मुद्दे पर मेरे सवाल का उत्तर देते हुए एक बार बुद्धादित्य ने मुझसे कहा कि "मेरे पिता ही मेरे गुरु हैं।" बहरहाल उन्होंने स्वीकार किया कि जब वे सिर्फ़ सात वर्ष के थे तब विलायत ख़ाँ के डिस्क संगीत ने उनकी कलात्मक संवेदनशीलता पर गहरा प्रभाव डाला था। वे कहते हैं कि प्रदर्शन देने का अनुभव बढ़ने के साथ-साथ यह प्रभाव और गहरा होता जा रहा है।

मेरे एक और सवाल के उत्तर में बुद्धादित्य ने बताया कि "मेरे पिता ने मुझे संगीत में सहज रूप से विकास करने का अवसर उपलब्ध कराया। उन्होंने मुझे रूढ़िगत तरीके से शिक्षा नहीं दी, क्योंकि वे सोचते थे कि पाठ पढ़ाना प्राथमिक की बजाय गौण महत्त्व की बात है। मैं उस्ताद विलायत ख़ाँ की शैली पर मुग्ध था और मेरे पिता ने, जो कि उस्ताद के घराने के प्रतिनिधि हैं, मुझे उस शैली को सीखने की मेरी कोशिश में मुझे सक्रिय मार्गदर्शन दिया।"

बुद्धादित्य का कहना है कि वह बुनियादी तौर पर नये रागों की रचना करने और जटिल रागों को बजाने के विरुद्ध हैं। वे अपनी रचनाएँ अक़सर तीन ताल में प्रस्तुत करते हैं। क्योंकि उनका मत है कि कोई दूसरा ताल इतना विभोरकारी अथवा सौंदर्यशास्त्रीय रूप से आनन्ददायक नहीं है। तीन ताल के अतिरिक्त वे एक ताल का भी प्रयोग करते हैं परन्तु विरले अवसर पर ही। उनके मतानुसार अधिकांश अन्य ताल पेचीदे और अक़सर ही भ्रम पैदा करनेवाले हैं और वे किसी प्रकार का सौंदर्यशास्त्रीय आनन्द भी नहीं देते। वे सिर्फ अकादेमिक कौतूहल पैदा करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्या संगीत को व्यवसाय के रूप में लेने के आपके निर्णय में आपके पिता का मत महत्वपूर्ण था ?" प्रश्न के उत्तर में बुद्धादित्य कहते हैं कि इंजीनियरिंग और संगीत में से अपने व्यवसाय का चयन करने का निर्णय मेरा अपना है। हल्की सी मुस्कान के साथ वे कहते हैं, "पिताजी ने कहा था कि मैं अब इतना बड़ा हो गया हूँ कि मैं अपना निर्णय स्वयं लूं।"

वास्तव में बुद्धादित्य के मन में किसी प्रकार का खेद नहीं है। व्यावसायिक रूप से वे साल में छः महीने पूरे व्यस्त रहते हैं। अपनी आमदनी की बाबत वे कहते हैं, "यदि मैंने युवा इंजीनियर के रूप में अपना कैरियर शुरू किया होता तो मुझे जितना मिलता, उससे कहीं ज़्यादा मुझे संगीतकार के रूप में मिल रहा है।"

बुद्धादित्य की दैनिकचर्या में तीन घण्टे का कठिन रियाज़ शामिल है। इसके बाद वे तीन घण्टे तक टेप सुनते हैं। वे पुराने समय के महान् संगीतकारों, मुख्य रूप से गायकों के रिकार्ड किये संगीत को अवश्य सुनते हैं। गायकों में वे बड़े गुलाम अली ख़ाँ का सर्वाधिक आदर करते हैं।

यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि विदेशी श्रोताओं के समक्ष सितारवादन में उन्हें कोई आनन्द नहीं आता हैं ! वे कहते है कि जिन देशों की उन्होंने यात्रा की है, वहाँ अधिकांश श्रोता भारतीय संगीत सभाओं में कौतूहलवश उपस्थित रहते हैं।

बुद्धादित्य को मध्यप्रदेश पर बहुत गर्व है, जहाँ उनका जन्म और लालन-पालन हुआ है। वे कहते हैं कि "आज मैं जो कुछ भी हूँ, वह मध्यप्रदेश में रहने के कारण है। अपनी इंजीनियरिंग की पढ़ाई समाप्त करते ही मुझे उस्ताद अलाउद्दीन ख़ाँ फैलोशिप प्राप्त हुई और इस तरह संगीत में मेरी उपलब्धियों को राज्य सरकार ने मान्यता दी।"

सामान्यतः विलक्षण प्रतिभा वाले व्यक्ति कुछ ज्यादा प्रौढ़ अवस्था में अपनी ख्याति यदाकदा ही बनाये रखते हैं। परन्तु बुद्धादित्य इस कोटि के नहीं हैं। इसमें शक नहीं कि उन्हें जल्दी ही ख्याति प्राप्त हो गयी है परन्तु विलक्षण प्रतिभावाला होने का उद्वेग भी धीरे-धीरे घट गया है और वे अपने संगीत को नयी दीप्ति देने की अवस्था में पहुँच गये हैं। पर यह सही है उनकी आगामी प्रगति परिवर्तनशील सांगीतिक परिदृश्य के प्रभावों के सम्पर्क में आ रही है। बहरहाल यह स्थिति लगभग सभी प्रदर्शनकारी कलाकारों की होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परन्तु बुद्धादित्य एक गंभीर कलाकार हैं जिनकी प्रवृत्ति पर्वतारोहण करने वाले रमते जोगी सरीखी है। इस लम्बी यात्रा के दौरान उन्हें अनेक घुमावों, मोड़ों और चक्करों का सामना करना पड़ सकता है। परन्तु वह जोगी जैसे-जैसे ऊपर जाता है, अनन्त से साक्षात्कार करने के लिए उसकी दृष्टि का विस्तार होता जाता है। यही स्थिति कलाकार की दृष्टि की होती है। वह जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता है, उसके आयाम का विस्तार होता जाता है।

चूंकि बुद्धादित्य **विलक्षण प्रतिभाशाली** होने की स्थिति पार कर चुके हैं, इसलिए अब वे कुछ रुकेंगे और अपनी पिछली उपलब्धियों पर ग़ौर करेंगे। वे ऐसे कलाकार हैं जो जानते हैं कि पूर्णता की कोई सीमा नहीं है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मालिनी राजुरकर : सारग्राही गायिका

□ □

घराना पद्धति हिन्दुस्तानी संगीत का सर्वाधिक विशिष्ट लक्षण है । यह भी कहा जा सकता है कि कई प्रदर्शनकारी शैलियों में घराना पद्धति का प्रगुणन एक ऐसा विकास है जिसकी सानी अन्य किसी सांगीतिक परम्परा में नहीं है । यह पद्धति उत्तर भारतीय संगीत का इतना अनिवार्य अंग है कि जहाँ संगीतकार अपने घरानों के ज़रिये जाने जाते हैं, वही रसिकगण उन संगीतकारों की सांगीतिक वंशावली को उनकी प्रस्तुति के तरीके से मोटे तौर पर पहचानते हैं ।

इस पद्धति ने गायन की ख़याल शैली के उद्भव और विकास में सर्वाधिक उल्लेखनीय योगदान किया है । घराने की संकल्पना की उत्पत्ति गुरु-शिष्य परम्परा की युगीन संकल्पना भी प्रतिष्ठापित करती है । इसका उद्गम घराने के संस्थापक की आवाज़ के विशिष्ट गुण से हुआ है और यही वह गुण है जो किसी घराने की शैली और दृष्टि को व्यापक रूप से निर्धारित करता है । इसके अलावा शास्त्रीय संगीत के दो बुनियादी तत्वों—स्वरों और लय के मध्य सौंदर्यशास्त्रीय संतुलन अर्जित करने की कोशिश की है । इस तरह अर्जित किये गये संतुलन की सापेक्ष स्थिति ने उसे विशिष्टत्व का अचूक आधार उपलब्ध कराया है ।

बीसवीं सदी के जीवन और विचार की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप घराना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पद्धति और उसके साथ-साथ गुरु-शिष्य परम्परा धीरे धीरे समाप्त होती जा रही है। जो लोग यह जानते हैं कि घराना पद्धति और गुरु-शिष्य परम्परा ने पारम्परिक संगीत के संरक्षण में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निबाही है, वे इस घटना को निराशा से देखते हैं, जबकि अन्य लोग इस पद्धति और परम्परा को समय के अनुरूप कहते हुए कुछ दूसरी ही बात सोचते हैं। इनके अलावा जानकार रसिकों और अध्येताओं का एक वर्ग है, जो वर्तमान में दो या दो से अधिक घरानों के संलयन से नये घरानों के उद्भव की सम्भावनाओं की कल्पना करते हैं।

इस संदर्भ में मालिनी राजुरकर की स्वर साधना तुरंत ध्यान में आ जाती है। वे अपने आप में सिर्फ़ अपनी अकादमिक या व्यावसायिक उपलब्धियों के ही कारण सबसे विशिष्ट नहीं हैं। विभिन्न घराना शैलियों की अन्तरात्मा के संबंध में अपनी अर्न्तदृष्टि और उन शैलियों को अपनी स्वयं की एक शैली में संलयित करने के विलक्षण चातुर्य की वजह से वे विशिष्ट हैं। उनकी गायन शैली में ग्वालियर गायकी का प्रभाव सर्वप्रमुख है। परन्तु वह सुदृढ़ आधार के रूप में है। इसी आधार पर मालिनी ने अपनी सांगीतिक दृष्टि को रूपायित किया है। इस प्रक्रिया में उनकी सांगीतिक दृष्टि शैली की गहन संवेदना और सौंदर्यशास्त्र की उससे भी ज्यादा गहरी संवेदना को उजगार करती है।

मालिनी राजुरकर का जन्म राजस्थान में अजमेर में हुआ था। वे राजस्थान विश्वविद्यालय की गणित की स्नातक हैं। विनम्र और सरल राजुरकर शादी के पहले प्रभा वैद्य के रूप में जानी जाती थीं। उन्होंने अकादेमिक अध्ययन करते हुए भी अजमेर संगीत नाटक अकादमी से **संगीत निपुण** की उपाधि प्राप्त की थी। उन्होंने **सुबोध संगीत शास्त्र** नामक ग्रंथ की भी रचना की है। यह ग्रंथ राजस्थान शासन द्वारा माध्यमिक शिक्षा के लिए पाठ्य पुस्तक के रूप में निहित किया गया है।

मालिनी में संगीतानुराग का उदय बाल्यकाल से ही हो गया था, और उनके विवेकी पालकों ने उन्हें संगीत साधना के लिए सक्रिय रूप से प्रोत्साहन दिया। उनकी वास्तविक संगीत शिक्षा विद्वान वरिष्ठ संगीतज्ञ राजा भैया पूँछवाले के प्रख्यात शिष्य ग्वालियर के गोविन्दराव राजुरकर के अधीन शुरू हुई। श्री राजुरकर ने उन्हें ग्वालियर गायकी की श्रेष्ठ परम्परा में दीक्षित किया।

बाद में, मालिनी का विवाह गुरु-पुत्र वसंतराव से हुआ। वसंतराव भी श्री पूँछवाले के शिष्य हैं और अब हैदराबाद के शासकीय संगीत महाविद्यालय में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व्याख्याता हैं। मालिनी आकाशवाणी और दूरदर्शन से अपने संगीत कार्यक्रम नियमित रूप से प्रसारित करती हैं। वे पूरे भारतवर्ष में प्रमुख संगीत सम्मेलनों में लगातार भाग लेती रहती हैं।

मालिनी राजुरकर ने युवा शीर्ष स्थानीय कलाकारों के बीच जो श्रेष्ठ स्थान बनाया है, उसका कारण यह है कि संगीत के प्रति वे गहन रूप से समर्पित हैं, रियाज़ करने की उनमें अद्भुत क्षमता है और उन्होंने उपयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त किया है। पुराने और आज के महान् संगीतकारों के संगीत को निष्ठापूर्वक सुनने में उन्होंने अपना समय लगाया है और फिर अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा और उर्वर कल्पनाशीलता से अन्य समकालीन ख़याल शैलियों के सर्वोत्तम गुणों को अपना लिया है। उन्हें ऐसी आवाज का वरदान मिला हुआ है जो तीनों सप्तकों में आह्लादित सुगमता से संचारत होती है। मालिनी अपनी आवाज को ख़याल के अतिरिक्त तराना अथवा टप्पा अथवा ठुमरी अथवा मराठी रंग संगीत अथवा भजन जैसी विविध गायन शैलियों के अनुरूप ढाल सकती हैं।

सन् 1969 में मालिनी राजुरकर ने बंबई में अपना पहला सार्वजनिक प्रदर्शन दिया तो रसिकगण अभिभूत हो गये। उसके बाद तो बंबई शहर का शायद ही कोई ऐसा संगीत सम्मेलन होगा जिसमें उन्होंने भाग न लिया होगा। मेरे विचार से उनकी शैली को वर्णित करने के लिए **सारग्राही** सबसे सही शब्द है। तकनीकी विश्वसनीयता और औपचारिक शुद्धता उनके ख़याल गायन के मुख्य तत्व हैं। ख़याल को वे सुपष्ट आकारों, विशिष्ट बोलतानों और विविध लयों में लिपटी तानों में पेश करती हैं। अप्रत्याशित उछाल, पेच और लोच युक्त उनके टप्पे निश्चय ही उनकी विशेषता हैं। उनके टप्पे महफिल का रंग जमाने में नहीं चूकते। दूसरी ओर, उनकी ठुमरियाँ एक अलग ही मिजाज़ को सुव्यक्त करने की क्षमता रखती हैं। यह मिजाज़ है हल्की सी शृंगारिकता का, जो गीत के कथ्य की विशेषता होती है।

वास्तव में महिला कलाकार मालिनी राजुरकर ने ख़याल गायन की एक नयी स्वागत योग्य प्रवृत्ति की शुरूआत कर एक नयी दिशा दी है। जिन्होंने मालिनी को सुना है, वे जानते हैं कि मेरे कहने का क्या अर्थ है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अजय पोहनकर : उपलब्धि की देहली पर

□□

समकालीन सांगीतिक परिदृश्य के पारम्परिक क्षेत्र का एक चिंतनीय पक्ष यह है कि सच्चे प्रतिभाशाली कलाकारों के एक बहुत बड़े वर्ग के लिए ऊपर आने और संगीत सम्मेलन के मंच पर सफल होने के लिए मिलनेवाले अवसरों की बेहद कमी है और जब मल्लिकार्जुन मंसूर तथा स्वर्गीय अमीर खाँ जैसे श्रेष्ठ संगीतज्ञ सामान्य तौर पर शास्त्रीय संगीत और विशेषकर हिन्दुस्तानी कंठ संगीत के धूमिल भविष्य की बात कह चुके हैं, तब जानकार हलकों में वास्तविक रूप से महसूस की जानेवाली यह चिंता और गहरी हो जाती हैं कि शासकीय एजेंसियों और अन्य प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा इस क्षेत्र में कलाकारों की नयी पीढ़ी को संवर्द्धित करने के लिए नगण्य कार्य किया जा रहा है। ऐसे कलाकारों को यदि अवसर मिले तो वे पुराने महान् कलाकारों के उत्तराधिकारी बनने के पात्र बन सकते हैं।

वास्तव में प्रतिभा की कोई कमी नहीं है। कठोर सत्य यह है कि सामयिक संगीत सम्मेलन का आयोजन करनेवाली संगीत संस्थाएँ तथा संगठन उनकी ओर ध्यान नहीं देते हैं, जबकि ये सम्मेलन ही प्रतिभा सम्पन्न आशावन लोगों के मुख्य आधार हैं। वर्तमान संदर्भ में अधिकांश मामलों में आयोजकगण स्थापित प्रतिष्ठावाले कलाकारों से लाभ उठाना पसंद करते हैं, (इस बात की परवाह न करते हुए कि उनके पारिश्रमिक कितने अधिक ऊँचे हैं) और समकालीन लोकप्रिय तत्त्व के आधार पर पक्का काम करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

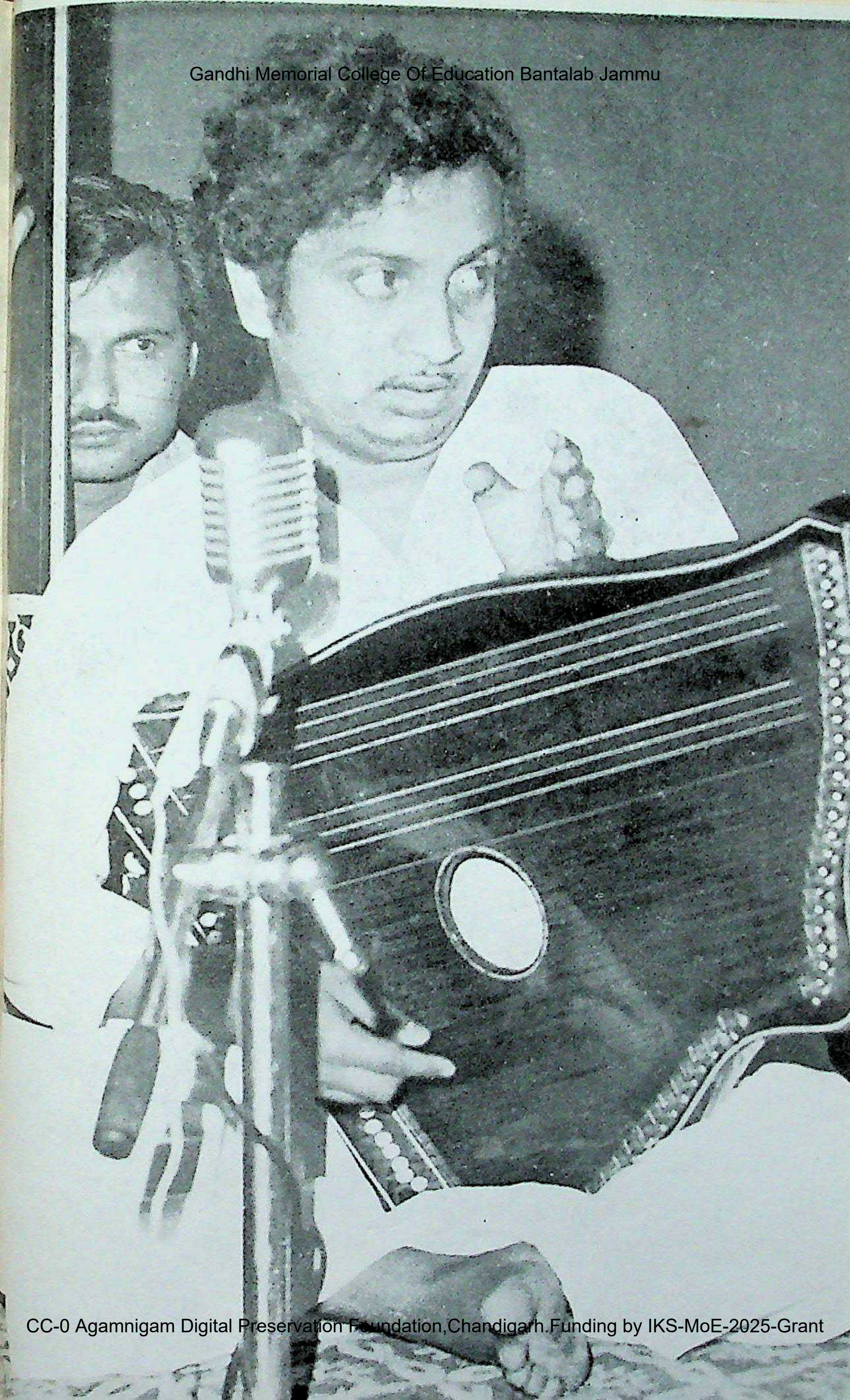

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कई अन्य क्षेत्रों की भाँति संगीत में भी ऐसे लोगों का चयन करना कठिन है। लोक संरक्षण और सराहना के इस युग में और भी ख़राब बात यह है कि नकली कलाकार को अक़सर थपथपाया और वास्तविक के रूप में स्वीकार किया जाता है। अतः हमारे मध्य ऐसे ढेर सारे संदिग्ध विशिष्टतावाले कलाकार हैं। ये लोग सही ढंग की जोड़-तोड़ बैठा कर संगीत सम्मेलन के मंच पर प्रतिष्ठित हो जाते हैं।

वास्तविक रूप से योग्य कलाकार (जिनमें से कुछ अब उम्र के लिहाज़ से युवा नहीं रह गये किन्तु अपने सांगीतिक उभार में हैं) आगे आने की आपा-धापी से दूर रहना पंसद करते हैं। ये वे लोग हैं जिन्होंने उच्चतर कला-मूल्यों को सँजोया और उनका पालन किया है और सम्पूर्ण समर्पण की भावना से अपनी अटल निष्ठा के साथ संगीत सेवा को अविच्छिन्न रूप से जारी रखा है। ये ही वे कलाकार हैं —इनमें भी विशेषकर युवा कलाकार—जो पारम्परिक संगीत के ह्रास और पतन को रोक सकते हैं। यदि इस तरह के प्रतिभाशाली कलाकारों को उनके संरक्षक आयोजकों और श्रोता जनता से समयोचित तथा उपयुक्त प्रोत्साहन के अभाव में तुलनात्मक रूप से अकेलेपन में विशीर्ण होना पड़ा तो संगीत का भविष्य सच में ही अधिक भयावह हो सकता है।

इस संदर्भ में चौंतीस वर्षीय **अजय पोह्नकर** का नाम स्वाभाविक रूप से सामने आता है। इस शर्मीलि सरल गायक में, जिसका जन्म जबलपुर में हुआ है, स्पष्ट रूप से प्रतिभा है और उसने कठिन परिश्रम कर उभरने की कोशिश की है।

पोहनकर को संगीत आनुवंशिक उत्तराधिकार में मिला है। उनकी माँ सुशीला बाई एक सुप्रसिद्ध संगीत परिवार की हैं। वे स्वयं एक अध्येता संगीतकार, संगीतज्ञ और शिक्षक हैं। उन्होंने संगीत में पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की है और जबलपुर के शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय के संगीत विभाग की अध्यक्षा हैं। पोहनकर के पिता राजा भाऊ एक सक्रिय एडवोकेट हैं किन्तु उन्होंने लखनऊ के भातखण्डे संगीत महाविद्यालय से स्नातक उपाधि प्राप्त की है। वास्तव में माँ ने ही अपने पुत्र अजय को पाँच वर्ष की उम्र से संगीत शिक्षा देना शुरू कर दिया था। उन्होंने उसे साफ़-सुथरे और व्यवस्थित प्रदर्शन के लिए मनोरम तकनीक और अनिवार्य तत्त्वों को बतलाया।

जब मैंने अजय पोहनकर को बम्बई के म्यूजिक सर्कल द्वारा आयोजित सायंकालीन संगीत सभा में पहली बार सुना था तो वे नव किशोर वय के थे। आयोजकों ने इस दुबले-पतले कमजोर-से किन्तु चमकदार आँखोंवाले बालक का परिचय दिया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तो उन्हें एक विलक्षण प्रतिभावाला बालक बतलाया जो नागपुर के संगीत सम्मेलन के मंच पर नौ वर्ष की आयु में अपना पहला प्रदर्शन दे चुका था।

बालक ने शीघ्र ही अपना गायन सुचारु रूप से शुरू कर दिया। अजय ने सायकालीन राग यमन का अनुभव प्रारम्भिक सुरों में ही करा दिया। उनकी बंदिश के मुखड़े और शुरूआत के बाद आलाप की सुविचारित संरचनाओं ने राग को उजागर किया और हमें अपने आन्तरिक आनन्द को भरपूर हर्ष ध्वनि में रूपांतरित करने को बाध्य कर दिया। उन्होंने पूरे गले की आवाज़ में गायन किया था, जो इस उम्र के बालक के लिए असाधारण बात थी। इसी तरह राग की सम्पूर्ण अवधारणा को प्रस्तुत करने में रूप और आकार सम्बन्धी अजय की समझ भी निर्दोष थी। अजय ने अपने गायन में आत्मविश्वास और आत्मनिष्ठा प्रदर्शित की।

इसके बाद उनके द्वारा सुनायी गयी ठुमरी में मीठा संगीत था, पर सिर्फ़ मिठास ही, उससे ज़्यादा कुछ नहीं। अजय की उम्र के बालक से ठुमरी शैली के गीत में अन्तर्निहित प्रेम के भाव को प्रभावकारी रूप से प्रस्तुत करने की आशा करना श्रोताओं के लिए उचित भी नहीं होता। इसके बावजूद, अजय के प्रस्तुतीकरण की शैली कुछ कम विश्वसनीय नहीं थी।

समग्रत: इस संक्षिप्त गायन से श्रोतागण प्रभावित हुए और उस प्रस्तुतीकरण को नव किशोर वय के बालक से अपेक्षा से अधिक ही सुन्दर योगदान के रूप में स्वीकार किया। जब मैं उस कार्यक्रम से बाहर आया तब मैंने यह अनुभव किया कि उन्होंने अपनी प्रस्तुति से हमारे मन में जो ऊँची आशाएँ बँधायी हैं, उन्हें साकार करने के लिए अजय को अभी एक लम्बा रास्ता तय करना बाक़ी है। मैंने सोचा कि इस प्रकार का प्रदर्शन अजय सरीखे विलक्षण प्रतिभावाले बालक द्वारा दिया जाना कठिन नहीं है, फिर भी ऐसे बहुत कम ही होते हैं जो शीर्ष स्थानीय कलाकारों के रूप में ऊपर उभर कर आ सकें। इस बावत खतरा अक़सर आत्माभिमानी चिकनी चुपड़ी बातों और प्रसिद्धि से होता है, जिनके फलस्वरूप एक सच्चे प्रतिभाशाली सांगीतिक कैरियर का दुःखद और असामयिक अंत हो जाता है।

हर्ष की बात यह है कि अजय पोहनकर के साथ ऐसा नहीं हुआ, यद्यपि यह कहना भी सही होगा कि अपनी स्वर-साधना के विकास में उन्हें अनेक उतार-चढ़ाव देखने पड़े।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहला कार्यक्रम सुनने के दस वर्ष से भी अधिक समय के बाद मुझे अजय को सुनने का मौक़ा मिला। मुझे बताया गया कि इस बीच एक प्रदर्शनकारी कलाकार के रूप में अपनी साधना के दौरान अजय को अकादेमिक क्षेत्रों और सम्मेलन मंचों पर कई सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। उन्होंने अंग्रेजी और संगीत में जबलपुर विश्वविद्यालय से एम. ए. किया और गंधर्व महाविद्यालय मण्डल से संगीत विशारद की उपाधि ली है। पारम्परिक संगीत के अनेक वर्तमान शीर्ष स्थानीय महान् कलाकारों और देश के महत्वपूर्ण नगरों तथा शहरों में आयोजित कई प्रमुख संगीत सम्मेलनों में विशाल श्रोता समूह से उन्होंने प्रशंसा प्राप्त की है। उन्होंने स्वर्गीय रजब अली ख़ाँ के प्रमुख शिष्य कृष्णराव मजुमदार से नियमित शिक्षा लेने के साथ-साथ वरिष्ठ संगीतज्ञ वसंतराव देशपाण्डे और प्रख्यात् गायक कुमार गंधर्व से भी शिक्षा ली है।

पोहनकर ने इस गायन में उल्लेखनीय प्रौढ़ता प्रदर्शित की। उनके द्वारा प्रस्तुत रागों में तकनीकी सक्षमता और ख़याल तथा ठुमरी शैलियों का व्यावहारिक ज्ञान स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ। उनकी भारी किन्तु श्रेष्ठ रूप में संस्कारित ध्वनि निश्चय ही उनकी प्रमुख विशेषता थी।

परन्तु उनकी संगीत कला का समग्र प्रभाव इस प्रकार का था जिससे लगा कि कोई कलाकार अब भी अपनी स्वयं की शैली के संधान में लगा हुआ है, उन्होंने जिन गायकियों को अपने संगीत में अन्तर्ग्रहित करने की कोशिश की थी, उनका प्रभाव अजय के प्रस्तुतीकरण में प्रतिबिम्बित हुआ था। परन्तु यह प्रभाव सभी गायकियों को एक साथ लिये जाने का था और न कि उनके स्वाभाविक संलयन का। बाद के वर्षों में भी अनेक बार सुनने के बाद तक यह प्रभाव मेरे मन में बना रहा। मजे की बात यह है कि इन बाद के वर्षों में पोहनकर अमीर खाँ और जसराज की गायन शैलियों से भी मुग्ध प्रतीत हुए।

परन्तु 1978 के बाद से पोहनकर का संगीत गहन आयामों को अर्जित किया प्रतीत होता है। इस बाद के समय में उनके द्वारा प्रस्तुत गायन परिनिष्ठित शैलीवाद (क्लैसिसिज्म) की गंभीर भावना या प्रस्तुति में अत्यधिक सतर्क अवधान तथा शुद्धता की वजह से ही स्मरणीय नहीं था। वह तो निजता की प्रबल भावना, मौलिकता के लिए ओजस्वी व्यग्रता तथा परम्परा के लिए अंतर्निहित आदर की भावना की वजह से उल्लेखनीय था। अब यह कहा जा सकता है कि उन्होंने अपनी पहचान खोज ली है। निश्चय ही अजय अपने कैरियर की फलदायी अवस्था की देहली पर हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ओमप्रकाश चौरसिया : उद्यमी सन्तूरवादक

□ □

एक समय था जब सन्तूर कश्मीर में एक सामान्य से संगतकारी लोक वाद्य के रूप में प्रचलित था। अत: एकल प्रदर्शन दिये जाने वाले वाद्य के रूप में हाल-ही-हाल में उसे प्राप्त प्रतिष्ठा विरोधाभासी लग सकती है। सन्तूर में एक सौ तंत्रियाँ होने के बावजूद उसका स्वर विस्तार इतना सीमित है कि वह शास्त्रीय संधान की आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ है। वीणा, सुरबहार, सारंगी, दिलरुबा, इसराज और कई अन्य वाद्यों की घटती हुई लोकप्रियता के साथ ही संतूर संगीत सम्मेलनों के मंच पर सिर्फ़ बीस वर्ष पहले आया है। इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि इतने कम समय में सन्तूर आज के नितान्त प्रबुद्ध श्रोताओं के बीच इतना लोकप्रिय हो गया है कि प्रतिष्ठाप्राप्त वाद्य यंत्रों—सितार, सरोद और बाँसुरी जिनका अभी भी वाद्य संगीत के क्षेत्र में आधिपत्य है—के साथ उसकी होड़-सी लगी है।

यद्यपि शास्त्रीय क्षेत्र में सन्तूर को प्रवेश दिलाने के लिए उद्योगी, आविष्कार कुशल, कला प्रवीण शिवकुमार शर्मा को सही तौर पर अग्रणी माना जाता है, फिर भी यह नहीं नकारा जा सकता है कि उनके साथ ही कुछ उद्यमी युवा कलाकारों को इस वाद्य ने आकृष्ट करना शुरू किया है और इन कलाकारों ने संगीत के क्षेत्र में प्रवेश कर अपने ढंग से इसके संगीत को प्रोत्साहित करने का निश्चय किया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-Mo

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सन्तूर वादन अत्यन्त विशिष्ट कोटि का होने के साथ ही कठिन भी है। इससे दो डण्डियों से संगीत उत्पन्न किया जाता है। इस वाद्य की एक सौ तंत्रियाँ 25 स्वरों की परिसीमा में समान रूप से वितरित रहती हैं। चौरसिया के सन्तूर-वादन की शैली उनकी अपनी है, और तुलनात्मक रूप से सरल भी है। उनके द्वारा आविष्कृत शैली का उद्देश्य यही है कि यह वाद्य ज़्यादा लोकप्रिय हो सके तथा सन्तूर-वादन के लिए कलाकारों को आकर्षित कर सके।

इसके अलावा, इस वाद्य-यंत्र के तीन सप्तकों में पिच (तारता) एक ही समान है, अत: इसके संगीत में एक किस्म की एकरसता आ जाती है। इसी वजह से चौरसिया ने इस वाद्य को एक नये रूप में विकसित किया है, जिसका आकार बड़ा है। इस विकास के फलस्वरूप सभी सप्तकों में पिच और स्वर अलग होते हैं।

ओमप्रकाश चौरसिया ऐसे ही एक युवा कलाकार हैं। सन्तूर-वादक बनने के लिए उन्होंने अपने कण्ठ संगीत को त्याग दिया है। शिवकुमार शर्मा की भाँति उन्होंने भी इस वाद्य यंत्र में कई उल्लेखनीय परिवर्तन सफलतापूर्वक सम्पन्न किये हैं और उसकी अभिव्यक्ति के क्षेत्र को विस्तार दिया है।

सन् 1946 में सागर में जन्मे ओमप्रकाश चौरसिया आजकल भोपाल में रहते हैं। उन्होंने वाद्य संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा अपने चाचा मदन चौरसिया तथा प्रताप मास्टर से प्राप्त की थी। बाद में उन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से 1970 में कला और कण्ठ संगीत में स्नातक उपाधि प्राप्त की। सन् 1962 में उन्होंने इसी विश्वविद्यालय से कण्ठ संगीत में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की और प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद, से तबला वादन में प्रवीणता के लिए संगीत प्रभाकर की पत्रोपाधि प्राप्त की।

सन् 1975 में चौरसिया ने तबला-वादन में स्नातक की उपाधि बनारस विश्वविद्यालय से प्राप्त की और अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन को दोहराते हुए स्वर्ण पदक अर्जित किया। बाद में इसी वर्ष उन्हें सन्तूर-वादन में उच्च प्रशिक्षण के लिए छात्रवृत्ति के लिए भारत सरकार द्वारा चुन लिया गया।

सन्तूर के तकनीकी साधनों को खोजने और प्रयोग में लाने के प्रयत्नों में सन् 1963 से चौरसिया को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के संगीत प्रोफेसर, प्रख्यात वीणा संगीतज्ञ लालमणि मिश्र से जो मार्ग दर्शन और प्रेरणा प्राप्त हुई उसका वे हृदय से और गहरी कृतज्ञता से उल्लेख करते हैं। प्रोफेसर मिश्र भी सन्तूर के जादूगर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे तथा विद्वान कृपालु गुरु थे। किन्तु 1979 में उनके असामयिक निधन से उनके इस निष्ठावान शिष्य और उत्तर भारतीय संगीत को गंभीर क्षति पहुँची। इस तरह चौरसिया अचानक ही अपने गुरु के निर्देशन से वंचित हो गये परन्तु उन्होंने एक सच्चे शिष्य की शुद्ध भावना से अपनी साधना पूरी निष्ठा के साथ जारी रखी। मध्यप्रदेश शासन द्वारा फैलोशिप दिये जाने से वे अपने वाद्य यंत्र से संबंधित अपना कठिन अनुसंधान जारी रख सके।

अनुसंधान विदग्धता के कारण चौरसिया को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य प्राप्त हुआ, जिसमें सामवेद तथा भक्ति संगीत की अन्य परम्पराओं के सस्वर पाठ तथा संगीत का अध्ययन करना था। उन्होंने समूह गायन और वाद्य वृन्दन में लोक संगीत और उपशास्त्रीय संगीत के उपयोग के संबंध में प्रयोग किये हैं। इसके लिए उन्होंने स्वरचित रचनाओं का उपयोग किया। इस कार्य के लिए उन्हें पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। उन्होंने कई नाटकों के लिए भी संगीत की रचना की है।

भारत में अनेक प्रतिष्ठित संगीत सम्मेलनों में सन्तूर वादन प्रस्तुत कर उन्होंने अपनी सांगीतिक प्रतिभा और कौशल को प्रकट किया है यद्यपि ये अवसर उन्हें बाद में मिले हैं। उन्होंने 1979 और 1980 में यूरोपीय देशों के दौरे में अनेक संगीत सम्मेलनों में सन्तूर-वादन किया।

ओमप्रकाश चौरसिया मध्यप्रदेश के एकमात्र सन्तूर-वादक हैं। इन दिनों वे उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादमी में सहायक संचालक हैं तथा मानसेवी संग्राहक के रूप में मध्यप्रदेश कला परिषद के संगीत संग्रहालय के प्रभारी भी हैं। इन कठिन जिम्मेदारियों के बीच में वे संगीत देवी की साधना—सन्तूर के संगीत की साधना—करने का समय निकाल लेते हैं। हँसमुख, सरल और बहुमुखी प्रतिभावाले कलाकार चौरसिया अपने इस नाजुक वाद्य यंत्र के भविष्य के संबंध में आशावान हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किरण देशपाण्डे : जिसके रक्त में ताल है

□ □

किसी भी सांगीतिक प्रदर्शन की सफलता (अथवा असफलता) में संगतकार निर्णायक भूमिका निबाहता है। संगत का सार सिर्फ़ उसके वादन की कला प्रवीणता में नहीं होता बल्कि मुख्य कलाकार के संगीत के काम का होने की उसकी क्षमता में भी होता है। यदि वह इस भूमिका को याद रखता है तो वह मुख्य कलाकार के लिए और स्वयं के लिए भी श्रेय अर्जित करता है।

आजकल के संगीत सम्मेलनों में, विशेषकर वाद्य संगीत की सभाओं में, देखी जाने वाली चिन्ताजनक प्रवृत्ति है—तबला संगतकार का चातुर्य प्रदर्शन करने के प्रलोभन में पड़ना। ऐसे अधिकांश अवसरों पर संगतकार के वादन में आक्रामकता का तत्त्व रहता है, जिसका उद्देश्य मुख्य कलाकार पर हावी होना होता है। इसमें भी शक नहीं कि कुछ अवसरों पर स्वयं मुख्य कलाकार अपने साथीदार को उसके तबले पर आभासी हल्ले भरी बाजीगरी के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते देखे गये हैं। इससे कौतुक तो बढ़ता है, किन्तु रंजन नहीं होता। यह कम जानकार लोगों को तुष्ट करने के लिए टीपटाप दिखाने की कोलाहल भरी कोशिश होती है।

कुछ समय पहले एक कण्ठ संगीत प्रस्तुति में युवा, शालीन **किरण देशपाण्डे** की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्कृष्ट संगत को सुनने के बाद मेरे मन में उपर्युक्त विचार आये। किरण जिस कलाकार की संगत कर रहे थे वे एक वृद्ध सम्माननीय वाद्य वादक थे।

किरण का वादन न सिर्फ़ मद्धिम और नियंत्रित था वरन उसमें वयोवृद्ध कलाकार के प्रति विनम्रता और आदर का भाव भी था। यह भावना मुख्य कलाकार के उन्नयनकारी संगीत के लिए उपयोगी होने की उनकी अनिवार्य इच्छा की थी। इसके तुरंत बाद मुझे किरण की संगत सुनने का एक और अवसर मिला। इस अवसर पर मुख्य कलाकार एक बिलकुल अलग शैली की प्रस्तुति वाला युवा संगीतकार था। परन्तु इससे किरण के वादन में कोई अन्तर नहीं आया। उन्हें तो उनको दी गयी भूमिका को पूरा करना था, और उन्होंने इस भूमिका को पहले की भांति ही वैशिष्ट्य के साथ निबाहा।

सन् 1940 में जबलपुर में जन्मे किरण श्रद्धेय संगीतकार और संगीतज्ञ स्वर्गीय एस. बी. देशपाण्डे के पुत्र हैं। उनके द्वारा जबलपुर में स्थापित किया गया संगीत महाविद्यालय उत्तर भारतीय संगीत को उनके योगदान का स्मारक है। इस संस्था का अब अपना भवन है। इसमें चार सौ विद्यार्थी और पन्द्रह स्थायी शिक्षक हैं।

और इसी सांगीतिक पर्यावरण में किरण पढ़े और बढ़े। यद्यपि उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है, फिर भी वे बाल्यकाल से ही ताल के प्रति सम्मोहित रहे। शाला और महाविद्यालय में अकादेमिक शिक्षा ग्रहण करते हुए भी उन्होंने अपने पिता के निर्देशन में तबला वादन में प्रवीणता अर्जित कर ली। विद् की परीक्षा में वे सर्वप्रथम रहे। विद् को स्नातक की उपाधि के तुल्य मान्यता प्राप्त है। उन्होंने कोविद् की उपाधि प्राप्त कर कण्ठ संगीत में प्रवीणता प्रदर्शित की।

बाद में किरण ने एक राष्ट्रीय छात्रवृति प्राप्त की जिससे वे दिल्ली घराने के तबले के उस्ताद शेख दाउद से तबला वादन का उच्च प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें। उन्हें 1958 के अंतर विश्वविद्यालय युवा उत्सव, नयी दिल्ली, में विशेष प्रशंसा प्राप्त हुई थी। उन्होंने 1959 में प्रयाग संगीत समिति के सम्मेलन द्वारा आयोजित एक विशिष्ट स्पर्धा में अनोखे लाल स्मृति शील्ड भी जीती।

वादक कलाकार और शिक्षक के रूप में किरण ने विदेश का विस्तुत भ्रमण सन् 1955 से किया है। इन दौरों में वे यूरोप, अमेरिका के अनेक राजधानी नगरों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में गये । उन्होंने पेनसिलवानिया विश्वविद्यालय, फिलाडेल्फिया, अमेरिका में, एक शिक्षण सत्र में जूनियर फैलो और 'आर्टिस्ट इन रेसीडेंस' के रूप में कार्य किया तथा वहाँ के रेडियो तथा दूरदर्शन पर अपना प्रदर्शन प्रस्तुत किया ।

बहुमुखी प्रतिभावाले किरण देशपाण्डे अब एक प्रतिभा सम्पन्न तबला वादक और एक विद्वान शिक्षक के रूप में प्रौढ़ हो गये हैं । वे भोपाल में शासकीय महाविद्यालय में पढ़ा रहे हैं । स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षाओं के छात्र उनसे कण्ठ संगीत की शिक्षा लेते हैं । इस पद पर आने के पहले वे भातखण्डे संगीत महाविद्यालय, लखनऊ में तबले और कण्ठ संगीत का अध्यापन पन्द्रह वर्ष तक करते रहे ।

वे दुःखी स्वर में कहते हैं कि "संगीत कार्यक्रम की सफलता में संगतकार बड़ा योगदान करते हैं परन्तु प्रेस कवरेज अथवा आर्थिक प्रतिदान के रूप में बिरले अवसर पर ही अपना अधिकारगत देय उन्हें प्राप्त होता है ।" वे महसूस करते हैं कि बिना ठीक पहुँच के युवा सुपात्र प्रतिभा के साथ शायद ही कभी ठीक व्यवहार किया जाता है ।

यह सही प्रतीत होता है क्योंकि आकाशवाणी के भोपाल केन्द्र से किरण नियमित रूप से अपने कार्यक्रम प्रसारित करते हैं किन्तु आकाशवाणी द्वारा समय-समय पर आयोजित किये जाने वाले राष्ट्रीय कार्यक्रमों में मैंने उन्हें अभी तक नहीं सुना है । यह बात तब है जबकि अनेक शीर्ष स्थानीय गायकों और वादकों के साथ तबले पर संगत करने के कारण उन्होंने ख्याति अर्जित कर ली है । परन्तु वे निराश नहीं हैं । इसके विपरीत वे अपने पिता के पद-चिह्नों पर चलते हुए विद्यादान का कार्य किये जा रहे हैं ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

) Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-C

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
10	6	खश	खुश
21	1	1962	1972
28	22	गुलाम बन्दगी खाँ	गुलाम बन्दगी खाँ बंगश
29	8	गनेशी लाला	गनेशी लाल
33	4	मुग़ल ख़ाँ	मुगलू ख़ाँ
33	6	मुग़ल ख़ाँ	मुगलू ख़ाँ
33	10	मुग़ल ख़ाँ	मुगलू ख़ाँ
34	12	मजूमदार	मुजुमदार
35	10	कलबना, नक्श	कुलवना, गुल, नक्श
47	14	1962	1972
48	22	पडिण्तजी	पण्डितजी
48	23	पडिण्तजी	पण्डितजी
58	9	कोमकाली	कोमकली
59	2	तानपुरा	तानपूरा
60	4	वैंभिन्नय	वैभिन्न्य
63	29	बादन	वादन
64	13	खुसरों	खुसरो
64	23	1979	1976
67	26	1962	1972
68	14	धान	वधान
76	11	अर्न्तदृष्टि	अन्तर्दृष्टि
78	13	आशावन	आशावान
83	18	1962	1972
83	26	1963	1973
86	11	जबलपुर	बड़गाँव (जिला-अकोला)
86	29	1955	1965
87	8	लखनऊ	जबलपुर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उस्ताद अलाउद्दीन खाँ अकादेमी
भोपाल, के लिए

राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली पटना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant